॥ओ३म्॥

जन-ज्ञान (मासिक)

मार्च 1997

महात्मा वेदभिक्षुः (पंडित भारतेन्द्रनाथ)

जन्म : १४ मार्च १९२८ निधन : २० दिसम्बर १९८३

जिसके घर में वेद नहीं वह हिन्दू का घर नहीं

(परमात्मा की अमर वाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य 1600/– रु०
अभी लेने पर 1200/– रु०

(मन्त्र–शब्दार्थ–छन्द–स्वर–देवता आदि सहित)

23×36 से०मी० साइज में, पृष्ठ 2200

बढ़िया सुनहरी जिल्दें। वजन लगभग 8 किलो

श्रेष्ठ बढ़िया पेपर पर 3000/– रु० अब 2250/– रु० में प्राप्त करें

आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा ½ धन अवश्य भेजें।

पं० राकेशरानी–अध्यक्ष **दयानन्द संस्थान**

वेद मन्दिर महात्मा वेदभिक्षु: सेवाश्रम, इब्राहीमपुर, दिल्ली–110036

सम्पर्क कार्यालय : 2286, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली–110005, दूरभाष–5724741

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्
जनज्ञान
वेदों की ओर
नई दिल्ली

हिन्दू राष्ट्र स्थापना हेतु संघर्ष करो

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

कार्यालय
2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5724741

प्रधान कार्यालय
वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम
लेखरामनगर (इब्राहीमपुर) पो. मुखमेलपुर
दिल्ली-36, दूरभाष : 7202249

संस्थापक
स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः

सम्पादक
पंडिता राकेश रानी
सह-सम्पादक, **दिव्या आर्य**

वार्षिक मूल्य - 60 रुपये
आजीवन - 501 रुपये
एक प्रति - 6 रुपये
विदेश में विमान से, 50 पौंड, 65 डालर
समुद्री डाक से 7 पौंड, 12 डालर
विदेश में आजीवन 5001 रुपये
मार्च 1997 वर्ष 31 अंक 11

सम्पादकीय

आग्नेय जीवन व्रती : महात्मा वेदभिक्षुः जी

मार्च मास अनेक महापुरुषों की स्मृतियों को उस प्रत्येक-राष्ट्रभक्त के मानस पटल पर उभारता है, जो स्वराष्ट्र के अतीत से शिक्षा और प्रेरणा प्राप्त कर भविष्य के समुज्ज्वल भविष्य के प्रति आस्थावान है। इस मास का नाता उस युग पुरुष से अटूट है जिसने समाज को पाखंड, अन्धविश्वास और आत्महीनता के त्रिताप से मुक्त करने हेतु अपना समग्र जीवन हलाहल का पान कर इस राष्ट्र को अमृत प्रदान कर स्वयं के मूलशंकर नाम को सार्थक कर, अपनों, परायों को दया-भाव का प्रसाद प्रदान कर 'दयानन्द' संज्ञा को सार्थक किया था। इस मास के साथ ही स्मृति जुड़ी है जिसने देव दयानन्द के दिव्य जीवन के प्रकाश से अपने मानस को आलोकित कर मातृभूमि की बंधन मुक्ति के लिए विदेशों में भी क्रांति का रणनाद गुंजाया और श्याम अथवा कृष्ण के पथ का अनुगमन कर श्यामजी कृष्ण वर्मा के रूप में अपने कर्म कौशल से इतिहास के पृष्ठों पर अपने कभी नहीं मिट पाने वाले हस्ताक्षर किए थे। स्मृति दिलाता है यह मास उस वीरांगणी भगतं सिंह के अमर बलिदान की भी जिसने आर्य समाज की देहरी पर बैठकर राष्ट्रभक्ति को अपने प्राणों का श्रृंगार बनाया था। जिसे भारत के स्वातन्त्र्य समर के इतिहास ने भगत सिंह के नाम से अपने पृष्ठों पर अमर स्थान प्रदान किया है।

दयानन्द के वेद प्रचार अभियान, श्यामजी कृष्ण वर्मा के क्रांति अनुष्ठान और स्वदेश की स्वतंत्रता हेतु बलि पथ का पंथी बन बलिदान देने वाले भगत सिंह से प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन का प्रति क्षण और रक्त का कण-कण समर्पित करने वाले उस महान् कर्मयोगी का भी हम इसी मास श्रद्धा सहित स्मरण करते हैं, जो 'दयानन्द संस्थान' और जनज्ञान के संस्थापक के रूप में हमारे लिए अनुकरणीय हैं, वंदनीय हैं। उस महान कर्मयोगी महात्मा वेदभिक्षुः (पूर्व नाम पं० भारतेन्द्रनाथ) की जन्मतिथि १४ मार्च १९२८ अर्थात् भारतीय काल गणना के अनुसार चैत्र कृष्ण अष्टमी १९८५ है। उनका यह ६९वां जन्म दिवस है। उन्हें चिर विदाई लिए डेढ़ दशक का काल खंड व्यतीत हो चुका है। उनकी पार्थिव काया तो निश्चय ही हमारे मध्य नहीं है, किन्तु उनकी यशकाया हमारी पथ प्रदर्शक बनी रही है और बनी रहेगी।

उनका उदार और हंसमुख स्वभाव तथा सहज ही अपना बना लेने के

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक : पंडिता राकेश रानी 2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 द्वारा

गुण जहां उनके व्यक्तित्व के विशेष आभूषण थे वहीं आर्य समाज ही नहीं अपितु वेद के प्रति अनुरक्त समग्र समाज, स्वसंस्कृति, स्वदेश और स्वराष्ट्र के भविष्य को संवारने हेतु सतत संघर्ष उनके जीवन को साधारण से पृथक कर असाधारण बना गया था। उन महात्मा वेदभिक्षुः ने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' के आह्वान को चरितार्थ करने वाले जीवनवृत्त से मूल्यवान बनाया था। मृत्यु की छाया में भी वह राष्ट्र के नवनिर्माण के स्वप्न देखते रहे थे। हर हिन्दू परिवार में परम पिता परमात्मा की अमर वाणी चारों वेदों को पहुंचाने के लिए घर फूंक तमाशा देखने वाले दयानन्द के उस दीवाने ने हिन्दू राष्ट्र का सबल सुदृढ़ स्वरूप ही अपने जीवन का एकमात्र स्वप्न बना लिया था। अपने क्रांतिकारी पिता पंडित गया प्रसाद शुक्ल के अधूरे स्वप्न को साकार करने के लिए अपनी किशोर अवस्था में ही ब्रिटिश राज्यसत्ता के उन्मूलन हेतु चल रहे महान अभियान में उसने सक्रिय योगदान दिया था। अपनी जननी और देव दयानन्द के सामाजिक कुरीतियों से मुक्त समाज के स्वप्न को साकार करने के लिए कर्मरत रही माता विद्यावती की गोदी में उसने सामाजिक क्रांति की गीता का भी पाठ किया था। दुनिया में अपना घर संवारने के लिए तो सभी हाथ पांव मारते हैं, किन्तु इस हम्मीर हठी कर्मयोद्धा ने न कभी अपने बारे में सोचा और न ही चिंता की कभी अपने घर संसार और परिवार की अपितु आर्य जाति और विशाल हिन्दू परिवार और उसके घर हिन्दुस्थान को संवारने के लिए उसने अपने जीवन का हर क्षण और रक्त की अंतिम बूंद तक समर्पित की। देव दयानन्द के प्रति अनन्य निष्ठा भाव से अनुरक्त वे शायद वेद का "जीवेम शरदः शतम्" मंत्र सार्थककर जाते, यदि समाज में उन्हें मुट्ठी भर भी ऐसे लोग मिल जाते जो उनके समर्पित सहपंथी बनकर उनके कदम से कदम मिला पाते।

कर्मठता की प्रतिमूर्ति महात्मा वेदभिक्षुः की जीवन यात्रा के अंतिम चरण का स्मरण आते ही मेरे मानस पटल पर यह धारणा उभर उठती है कि उन्होंने स्वेच्छया अपनी नश्वर काया राष्ट्र देवता के श्री चरणों में समर्पित की थी। क्योंकि उन्होंने अपने जीवन का उत्तरार्द्ध हिन्दू जाति पर होने वाले अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध झोंक दिया था और वह अपने शरीर पर अत्याचार करने से भी बाज नहीं आए थे। महाप्रस्थान वेला से कुछ समय पूर्व से ही वह ऐसा अनुभव करने लगे थे कि उनकी जर्जर सी होती जा रही काया, जर्जरीभूत राष्ट्र की स्थिति को संभालने में समर्थ नहीं हो पा रही है। वैदिक दर्शन और हिन्दुत्व के प्रति अडिग आस्था से आप्लावित उनका हृदय इस मान्यता से इस धारणा से परिपूर्ण था कि आसेतु हिमाचल यह पुण्य भूमि एक न एक दिन एक ऐसे महान देश का, सबल राष्ट्र का रूप अवश्य ग्रहण करेगी जो अपनी आध्यात्मिक गरिमा, आर्थिक समृद्धि और प्रचंड सैन्य बल के आधार पर सन्नद्ध होकर मानवता विरोधी शक्तियों को अपनी प्रबल हुंकार से प्रकम्पित कर उन्हें इस सत्य से अवगत कराएगी कि मानव हित चिंतन, रक्षण तथा **सर्वे भवन्तु सुखिनः** का लक्ष्य और **सर्वे संतु निरामयाः** की कामना को साकार करने के लिए कर्मरत रहना ही महान जीवन लक्ष्य है। वे साधनविहीन थे किन्तु लक्ष्यहीन जीवन उन्हें कभी नहीं भाया था। वे साधनामय जीवन के धनी थे। श्रम और ध्येय के प्रति समर्पण का अडिग भाव ही उनकी पूंजी थी। उनका ध्येय था वैदिक ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न ऐसे सबल भारत के सृजन का, जिसकी प्राणवायु वह हिन्दुत्व बने जो संकीर्णता और मतवाद का नहीं अपितु वास्तविक मानववाद का प्रेरक है, किन्तु **शठे शाठ्यम समाचरेत**, जिसकी जीवन विधा है। हिन्दू समाज और इस महान् राष्ट्र के अंग-प्रत्यंग की पीड़ा को उन्होंने अनुभूति ही नहीं किया था, अपितु समस्याओं के चक्रव्यूह से राष्ट्र को उबारने के लिए वे उस दर्शन के दर्शन स्वदेश के जन-जन को कराने के लिए सतत कर्मरत रहे जिसका सार मातृभूमि, पितृभूमि और पुण्यभूमि के प्रति अडिग आस्था में निहित है।

दयानन्द द्वारा प्रदर्शित पथ के वह राहगीर थे, देवता स्वरूप भाई परमानन्द, अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द और स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के संकल्पित, समर्पित जीवन, उनकी प्रेरणा के अजस्र स्रोत थे। साधनों से विहीन किन्तु साधना से संपन्न जीवन के धनी महात्मा वेदभिक्षुः मेरी और उन सबकी प्रेरणा के स्रोत हैं, जिन्होंने भव्य भाव के सृजन के भावों की पूंजी को सहेजा है। उनका जीवन था वह जीवन जो अभावों में झुका नहीं, तूफानों में रुका नहीं। वह महात्मा मेरी प्रेरणा हैं और वे सभी बन्धु-बांधव मेरे लिए संबल हैं, जो उनके इस जन्म दिवस पर उनका स्मरण मात्र ही नहीं करेंगे, केवल मौखिक श्रद्धांजलि की परिपाटी ही नहीं निभाएंगे अपितु उनकी जयन्ती के प्रेरक अवसर पर यह संकल्प भी ग्रहण करेंगे कि

इस अंक में पढ़ें

(आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखकों की रचनाओं में अभिव्यक्त सभी विचारों से पूर्णतः सहमत हो।)

आग्नेय जीवन व्रती : महात्मा वेदभिक्षुः जी —*सम्पादकीय* १
अपने प्रभु से एवं क्रांति की मशाल—महात्मा वेदभिक्षुः की अमरवाणी ४
सामयिक विचार —महानगरों का फैसला ६
आपके पत्र ७
परमेश्वर का नाम तथा स्वयं प्रोक्त सात मन्त्र -वेद विचार ८
महर्षि दयानन्द और युगान्तर —*सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'* ११
अमर हुतात्मा पंडित लेखराम जी —*देवीदास आर्य* १५
पं० भोजदत्त शर्मा तथा उनका आर्य मुसाफिर विद्यालय—*डॉ भवानी लाल भारतीय* १९
स्वतंत्रता संग्राम के शिल्पी : श्याम जी कृष्ण वर्मा —*अजय कुमार गुप्ता* २१
वीराग्रणी : सरदार भगत सिंह—*दिव्या आर्य* २३
एक सार्थक जीवन—महात्मा वेदभिक्षुः —*सत्यपाल* २५
बहुमुखी प्रतिभा के धनी : महात्मा वेदभिक्षुः —*चमन लाल क्षत्रिय* २९
अमिट छाप—*डॉ० सु०ब० काले* ३०
संकल्प-पुरुष : महात्मा वेदभिक्षुः—*रघुवीर वेदालंकार* ३२
महात्मा वेदभिक्षुः का जीवन—प्रेरणा का अक्षत पुंज —*विक्रम नारायण सावरकर* ३३
एक लाख की शुद्धि का संकल्प करने वाला विलक्षण पथिक—*नरेन्द्र अवस्थी* ३४
शिवरात्रि पर हम संकल्प लें—*राधेश्याम आर्य* ३६
न्याय का उद्देश्य क्या है?—*विवेक भूषण दर्शनाचार्य* ३७
होलिकोत्सव पर्व और स्वामी श्रद्धानन्द—*के०के० शुक्ला* ३९
अखण्डता के सजग प्रहरी : चाणक्य—*डा० रमाशंकर* ४१
उन सब की दृष्टि में महात्मा वेदभिक्षुः का व्यक्तित्व —*मदन सिंह* ४३
समाचार दर्शन ४८

महात्मा वेदभिक्षुः का वेद प्रचार अभियान गतिमान रहे। उस अभियान के प्रवक्ता 'जनज्ञान' का आलोक समग्र देश ही नहीं अपितु विदेशों में भी अपने आलोक को बिखेरता रहे और **तमसो मा ज्योतिर्गमय** के वैदिक आह्वान को दिग-दिगन्त में निनादित करता रहे। राष्ट्र जागरण यज्ञ की ज्वाला मंद नहीं होने पाए। मुझे आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि राष्ट्र की मंगल कामना का आकांक्षी हर हाथ दयानन्द संस्थान के प्रति सहयोग हेतु बढ़ेगा।

मेरी यही है कामना, यही है अनुरोध यही है आग्रह कि महात्मा वेदभिक्षुः के अधूरे सपनों की पूर्ति के महान् कार्य में, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और योगेश्वर श्रीकृष्ण के प्रति श्रद्धानत, देव दयानन्द के प्रति अनुरक्त तथा शिवा, प्रताप, गुरु गोविन्द सिंह और वीर बंदा वैरागी के वंशज आप कोटि-कोटि जन, सत्य, धर्म और संस्कृति के प्रतीक पावन ओ३म् ध्वज को समग्र विश्व में लहराने की स्वर्ण संधि लाने हेतु महात्मा वेदभिक्षुः द्वारा छेड़े गए महान अभियान में सक्रिय योगदान प्रदान करेंगे। वेदामृत से सृजित गतिशील हिन्दुत्व की चिंतन धारा को गतिमान रखने हेतु अपना मनसा, वाचा, कर्मणा समर्पित होने का सद् संकल्प ग्रहण करेंगे। देशद्रोही, राष्ट्रद्रोही, मानवता द्रोही तत्त्वों के नापाक इरादों को खाक में मिलाने के महात्मा वेदभिक्षुः के स्वप्नों की पूर्ति हेतु अपनी पूर्ण शक्ति से हमें सहयोग प्रदान करेंगे।

मुझे अपनी उन बहिनो और भाइयों पर पूर्ण भरोसा है, जिन्होंने उस कर्मयोगी के अपनी नश्वर काया का परित्याग कर महाप्रस्थान केबाद भी हमें साहस प्रदान किया है जो उनके कार्य के प्रति आस्थावान हैं। हमें विश्वास है कि अन्य अनेक को भी वे विशाल दयानन्द संस्थान परिवार का अविभाज्य अंग बनने को प्रेरित करने का व्रत महात्मा जी की इस जयन्ती के अवसर पर ग्रहण करेंगे। क्योंकि महात्मा जी का कार्य राष्ट्र मन्दिर को आभामंडित करने का है जिसे खंड-खंडित करने लिए विदेशी चिंतन और धन से सम्पन्न अनेक विघ्न संतोषी जन एक प्रबल प्रभंजन के सृजन की दुरभिसंधि में संलग्न हैं। **'राष्ट्रे जागृयाम वयम्'** के दायित्व का निर्वहन युग की मांग है। इस जागरण यज्ञ में कोटि-कोटि जन द्वारा समिधा समर्पण की प्रतीक्षा है। अपेक्षा है निश्चय ही आप उपेक्षा नहीं करेंगे। ❑

महात्मा वेदभिक्षुः की अमरवाणी

अपने प्रभु से!

प्रभो! आपसे क्या छिपा है, आप सबके मन की बातें जानते हैं। आपसे अधिक कौन जान सकता है हमारी मन की भावना को।

आपके ज्ञान के प्रसार के लिए आपके सच्चे पुत्र ऋषि दयानन्द के लक्ष्य पूर्ति के लिए भगवान्! आपके ही बल पर हम लगे हैं। हमें शक्ति दो नाथ! कि हम बढ़ते जाएं और अपने गुरुदेव का कार्य पूर्ण कर सकें।

संसार का प्रवाह आज अधर्म की ओर है। तुम्हारा नाम लेने वाले भी तुम्हें भुला चुके हैं। प्रभो! ऐसी कृपा करो कि संसार को तुम्हारे नाम पर चलाने के प्रयत्नों में हम सफल हो सकें।

तुम्हारे पुत्रों को बोध हो, वे सत्य और असत्य में भेद कर सकें, समय के साथ न बह, समय को बदलने का संकल्प ले सकें। ऋषि दयानन्द की जय बोलने वाले दयानन्द का कार्य करने में लगें।

हम पर तुम्हारा वरदहस्त रहेगा ही, यह विश्वास लेकर प्रभो! तुमसे यही प्रार्थना करते हैं कि हम कभी भटकें नहीं, घबराएं नहीं, बढ़ते जाएं, तुम्हारा साथ कभी छूटे नहीं।

हम विश्व विजय कर सकें, धरती को तुम्हारे चरणों में झुका सकें। सर्वत्र ऋषि दयानन्द की विजय पताका लहरा, वेद की विचारधारा का साम्राज्य स्थापित कर सकें।

प्रकाश और बोध के लिए ज्योतिर्मय प्रभो! हम तुम्हारी छाया में बैठे रहें-बैठे रहें।

(जनज्ञान फरवरी १९७२ से उद्धृत)

●●●

क्रांति की मशाल

आज नया प्रकाश चाहिए! सत्य का, मानवता का, धर्म का। ऐसे धर्म का जो प्यार का अमृत बरसाता हो।

मनुष्य एक बने, उसके भेद मिटें, उसमें स्नेह हो। स्वार्थ जले और ममत्व उभरे, संसार स्वर्ग बन जाए।

नयी राह, पुरानी राह एक हैं। आरम्भ से आज तक मानव की मूल भावना एक है। शान्ति, आनन्द, सुख और तृप्ति के लिए मनुष्य संघर्ष करता आया है और करता रहेगा।

किन्तु वर्तमान 'सत्य' को भूल असत्य को जीवन लक्ष्य मान बैठा है। शरीर ही सब कुछ है, यह हमने मान लिया और भटक रहे हैं। पता नहीं, क्या होगा इसका परिणाम? समय-समय पर सुधारक क्रांति की मशाल जलाते हैं। वे युग बदलते हैं, सत्य की विमल ध्वजा सर्वत्र फहराते हैं।

वह पावन पूत क्रांति, जो पाप को जला सके। असत्य को मिटा सके, धर्म को उठा सके, मनुष्य को जगा सके, हम सर्वत्र करना चाहते हैं।

हमारा संघर्ष पाप के विरुद्ध है। अज्ञान के विरुद्ध है, सर्वनाश के विरुद्ध है। हम लड़ रहे हैं। लड़ते रहेंगे, बढ़ते रहेंगे जब तक भूमंडल में कहीं भी अज्ञान की काली छाया दीखेगी।

तुम क्या सोचते हो? तुम्हारा लक्ष्य क्या है, बताओ तो सही? क्या तुम्हारे मन में कभी यह भाव उभरता है कि हम फिर से एक नयी धरती को जन्म दें। यदि उत्तर हां में हो तो साथ आओ हमारे। चलो कुछ करने या मरने।

विश्वास रखो, अज्ञान के बादल हटेंगे, नया सूरज उगेगा और एक दिन मनुष्य, मनुष्य बनकर धरती पर स्वर्ग लाएगा— कब? इसका उत्तर आपके हाथ में है।

(सितम्बर १९७५ 'जनज्ञान' से उद्धृत)

॥ ओ३म् ॥

दयानन्द संस्थान का वार्षिकोत्सव

एवं

महात्मा वेदभिक्षुः जयन्ती समारोह

१० से १६ मार्च १९९७ तक भव्य आयोजन

स्थान : वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, इब्राहीमपुर (पं० लेखराम नगर) दिल्ली-३६

वार्षिकोत्सव के अवसर पर १० मार्च से योग शिविर तथा यजुर्वेद पारायण यज्ञ, १६ मार्च पूर्णाहुति। १४ मार्च से १६ मार्च तक वेद प्रचार सम्मेलन, सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन एवं सामाजिक समरसता सम्मेलन भी आयोजित होंगे। जिनमें भाग लेने के लिए आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वानों एवं प्रमुख नेताओं को आमंत्रित किया जा रहा है। जिसमें स्वामी सत्यपति, स्वामी दीक्षानन्द, श्री महेश वेदालंकार, श्री वेदप्रकाश श्रोत्रिय, सुश्री उमा भारती, शकुन्तला आर्य, श्री बालेश्वर त्यागी, डॉ० रघुवीर, हरदयाल देवगुण, श्री केदारनाथ साहनी, वैकुण्ठलाल 'प्रेम', पूर्व मुख्यमंत्री मदनलाल खुराना आदि शामिल हैं।

आपकी उपस्थिति परिवार एवं इष्ट मित्रों सहित प्रार्थनीय है। बड़ी संख्या में पधारिये। दिल्ली की सभी आर्य समाजों के मंत्री और प्रधानों से प्रार्थना है कि उन तारीखों में बसें लेकर वेद मन्दिर पहुंचें और उत्सव की शोभा बढ़ायें। कार्यक्रम को सफल बनाने में तन-मन-धन से अधिक से अधिक सहयोग प्रदान कर अपना कर्त्तव्य निभायें।

१५ एवं १६ मार्च को अपराह्न १२ बजे से सायं ५ बजे तक विभिन्न सम्मेलन आयोजित होंगे।

निवेदक

पं० राकेशरानी · **रमेश चन्द्र चोपड़ा** **स्वामी जगदीश्वरानन्द** **डा० धर्मबीर**

अध्यक्ष दयानन्द संस्थान *संयोजक वानप्रस्थाश्रम निर्माण समिति* *आचार्य दयानन्द संस्थान* *मंत्री, दयानन्द संस्थान*

संयोजक

बलजीत सिंह मान, श्यामलाल सचदेवा, ब्र० सुमेधा आर्या, मदन सिंह

संयोजक समिति

प्राध्यापक डा० हरीन्द्र श्रीवास्तव, शिव कुमार गोयल पत्रकार, विनय सिंघल एडवोकेट सत्यपाल घई, नरेन्द्र अवस्थी पत्रकार, वी० पी० सिंह एडवोकेट, प्राध्यापक वीरेन्द्र अग्रवाल, के० के० शुक्ला, पत्रकार, रोशन लाल गुप्ता, डा० कृष्ण स्वरूप श्रीवास्तव, कैलाश चन्द्र पत्रकार, तिलकराज चोपड़ा, डा० लक्ष्मण प्रसाद शास्त्री, ओम प्रकाश 'पंडित', श्याम रतरा, डा० कैलाश चन्द्र, महेन्द्र प्रताप, पत्रकार, चन्द्र प्रकाश, डा० वी० पी० आर्य, वेद प्रकाश विद्यार्थी, सतीश अग्रवाल, डा० रवि कुमार, चमन लाल क्षत्रिय पत्रकार, सत्यनारायण गुप्त, प्रो० आनन्द कुमार मलहोत्रा, गिरधर गोपाल शर्मा, सुखबीर सिंह सैनी, प्राचार्य विजय गुप्त, विशम्भर दयाल शर्मा, नन्दलाल शर्मा, अपूर्व पांडेय, राकेश भार्गव, जागेराम प्रधान, ब० रा० ना० भार्गव, श्रीचन्द जैन, नैन सिंह चौहान, रविन्द्र कुमार शर्मा, धर्मपाल गोयल, राम प्रकाश सैनी, निर्मल चोपड़ा, राजपाल चौहान, सत्येन्द्र कुमार शर्मा, राधेश्याम शर्मा

कार्यालय : २२८६, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-५

दूरभाष : ५७२४७४१

वेद मन्दिर आने का मार्ग : मोरीगेट (अन्तर्राज्यी बस अड्डा) से बस नं० १६२, १९२। अपने वाहन से किंग्सवे कैम्प से निरंकारी कालोनी—बुराड़ी ग्राम होते हुए सीधा मार्ग वेद मन्दिर पहुंचता है।

सामयिक विचार

महानगरों का फैसला

भाजपा और उसके सहयोगी दलों के गठबंधन के लिए नया साल काफी फलदायी साबित हो रहा है। पंजाब में अभूतपूर्व जीत के तुरन्त बाद उपचुनावों में अपनी बढ़त साबित करने के साथ ही इस गठबंधन ने दिल्ली और मुम्बई महानगरों के निगम चुनावों में जिस तरह कांग्रेस को पछाड़ दिया है उससे कई बातों के साफ संकेत मिल रहे हैं। हालांकि दिल्ली में भाजपा की जीत अप्रत्याशित नहीं थी, लेकिन पिछले कुछ समय से पार्टी जिस तरह भीतरी खलबली से ग्रस्त थी, उसे देखते हुए यह खतरा तो बना ही था कि भाजपा सत्ता विरोधी भावना की शिकार न हो जाए। पार्टी के भीतर हाल के वर्षों में पनपी खेमेबंदी और बड़े पैमाने पर विद्रोही उम्मीदवारों की चुनौती से स्वयं भाजपा नेतृत्व चिंतित था। आम जनता में चुनावों के प्रति अरुचि ने इस चिंता को बढ़ाया ही। इसका असर तो नतीजों पर पड़ा, लेकिन इतना नहीं कि मतदाता बड़े पैमाने पर किसी और विकल्प के लिए तैयार हो जाता। यही बात मुम्बई के निगम चुनावों से साफ है। बरसों तक नगर निगम पर अधिकार जमाए बैठी कांग्रेस को जिस मजबूती से भाजपा-शिवसेना गठबंधन ने खदेड़ दिया उससे यह साफ है कि रमेश किन्नी कांड, अण्णा हजारे के आन्दोलन और बाला साहब ठाकरे को सुनाई गई सजा जैसे बहुप्रचारित मुद्दों के बावजूद मतदाता ने इसी गठबंधन को समर्थन दिया। इन दोनों महानगरों के चुनाव नतीजे यह संकेत देते हैं कि मतदाता चाहे इस गठबंधन की सरकारों से पूरी तरह संतुष्ट न भी हो उसकी दृष्टि में कांग्रेस इसका विकल्प नहीं हो सकती। एक अखिल भारतीय पार्टी के रूप में कांग्रेस अब अतीत की बात बनती जा रही है।

महाराष्ट्र के नगर निगम चुनावों ने दो और बातों की ओर भी इशारा किया है। एक ही जमीन पर समानान्तर विकसित होने वाली दो पार्टियों– भाजपा और शिवसेना के बीच कहीं-कहीं स्वाभाविक और कहीं पूर्वाग्रहों के कारण पैदा हुए टकराव का खामियाजा इस गठबंधन को उठाना ही पड़ेगा। जिन नगरों में इन पार्टियों के बीच सहमति नहीं बन पाई थी और वहां या तो ये दल एक-दूसरे के खिलाफ लड़ रहे थे या फिर भीतर-भीतर एक-दूसरे के खिलाफ काम करते रहे। मतदाता की इस चेतावनी को यह गठबंधन नजरअंदाज नहीं कर सकता। दूसरी बात यह कि आधुनिक बाजारवाद और औद्योगीकरण के सबसे बड़े केन्द्र मुम्बई में भाजपा-शिवसेना की विजय क्या यह बताती है कि मनमोहन सिंह और चिदम्बरम के नई अर्थव्यवस्था का श्रेय लेने के बावजूद मतदाता की दृष्टि में अर्थव्यवस्था का बेहतर संचालन भाजपा ही कर सकती है? प्रशासनिक शहर दिल्ली का संदेश भी कुछ ऐसा ही है। साफ है कि कांग्रेस पार्टी के लिए यह अशुभ समाचार है। भाजपा को सत्ता से बाहर रखने के लिए संयुक्त मोर्चे के साथ जुड़ने पर मजबूर कांग्रेस के लिए एक विचित्र चक्रव्यूह तैयार होता जा रहा है। मोर्चा सरकार के साथ रहने से उसकी सार्वजनिक छवि सुधरी तो नहीं, जिन कथित सांप्रदायिक शक्तियों को तोड़ने के लिए उसने यह किया वे शक्तियां तेजी के साथ आगे बढ़ रही हैं। बदले में उसे अल्पसंख्यक वोट मिलने का भरोसा भी समाप्त होता जा रहा है। मुंबई के चुनाव में भी यह बात साफ हो गई है। समाजवादी पार्टी की मुंबई में उतनी सीटें जीतने की हैसियत नहीं थी, जितनी इस चुनाव में जीतीं। साफ है कि यह चमत्कार उसने मुसलमान मतों के बूते ही किया। यानी भाजपा-शिवसेना के डर से भी मुसलमान कांग्रेस को समर्थन देने को तैयार नहीं लगते। आज की भारतीय राजनीति की त्रासदी है कि संयुक्त मोर्चे को अपने कट्टर दुश्मन भाजपा गठबंधन की हर जीत और अपनी सहयोगी पार्टी कांग्रेस की बेबसी से खुशी होती है। इससे मोर्चा सरकार को कुछ और मोहलत मिलती है। लेकिन सवाल है कि यह मोहलत जब समाप्त होगी तो क्या होगा। उसके और भाजपा के बीच कांग्रेस बची नहीं रहेगी तो नतीजे का अंदाज लगाना मुश्किल नहीं है।

[२७ जनवरी १९९७, जनसत्ता से साभार]

पैदल सफ़र करो अब भाई–विजय निर्वाध

रेल बजट को पढ़ा ध्यान से, पढ़ कर बोले नन्दन भाई।
महंगे हो गए रेल पार्सल, महंगी हो गई माल ढुलाई।
बात काम की नहीं एक भी केवल वादे और नारे हैं।
पहले ही थे प्राण कंठ में और बढ़ेगी अब मंहगाई॥
सिर्फ़ दूसरी क्लास छोड़ कर सबका ही बढ़ गया किराया।
रेल सफ़र का सपना छोड़ो पैदल सफ़र करो अब भाई॥

आपके पत्र

दिल्ली सरकार का सराहनीय निर्णय

महोदय, समाचार पत्रों में यह पढ़कर प्रसन्नता हुयी कि दिल्ली सरकार दिल्ली में अपना एक विश्वविद्यालय खोलने की योजना बना रही है। मैं इस संकल्प के लिए मुख्यमंत्री महोदय को बधाई देता हूं। उक्त समाचार में प्रस्तावित विश्वविद्यालय से तकनीकी और चिकित्सा सम्बन्धी संस्थानों को तो सम्बद्ध करने का उल्लेख है किन्तु कला और विज्ञान के सामान्य विषयों का उल्लेख नहीं है। अतः मेरा अनुरोध है कि संस्कृत, आयुर्वेद एवं ज्योतिषशास्त्र सहित सभी विषयों का समावेश इस विश्वविद्यालय में किया जाये। इस विश्वविद्यालय की अद्वितीय विशेषता के लिए मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि यहां के विभिन्न विषयों को पढ़ने वाले छात्रों को प्राचीन भारतीय दृष्टिकोण से परिचित कराने के लिए उनके विषय से सम्बद्ध संस्कृत ज्ञान उन्हें प्रदान करने की व्यवस्था की जाये। इससे न केवल छात्रों को भारत की प्राचीन अमूल्य धरोहर का ज्ञान होगा अपितु उस ज्ञान के आधार से वे अपने-अपने क्षेत्र में नये आयामों की खोज भी करने को प्रवृत्त होंगे। यह भी आवश्यक है कि विश्वविद्यालय का सभी कार्य हिन्दी में हो।

डॉ० कृष्णलाल आचार्य संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

योजना आयोग से आग्रह

महोदया, जनज्ञान के माध्यम से मैं योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री मधु दंडवते का ध्यान कुछ बातों की ओर दिलाना चाहता हूं। योजना आयोग के नव गठन में ग्रामीण आशान्वित हुए हैं। चिन्तनीय है कि जनोपयोगी योजनाओं का लाभ आम जनता को क्यों नहीं मिल रहा है। आम योजना कारगर नहीं होने पर अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति उपयोजना का प्रावधान किया गया, किन्तु इसका भी समुचित लाभ नहीं मिला। सच्चाई की उपेक्षा नहीं करें तो मानना पड़ेगा कि लोगों में आशा, उत्साह, नैतिकता और विवेक की कमी है। ऐसे लोगों के लिये धन की वर्षा भी की जाय तो अपेक्षित लाभ नहीं मिलेगा। सुनिश्चित रोजगार योजना, महिला समृद्धि योजना, समेकित बाल विकास योजना, अल्प बचत योजना, ऋण मुक्त परिवार योजना, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण योजना, शिक्षा प्रसार योजना, शिक्षित बेरोजगार योजना, शराब, गांजा, भांग, तम्बाकू मुक्त परिवार योजना को समेकित कर श्रम शिविर में कार्यान्वित की जाय। बिहार में बहुत योजनाएं कार्यान्वित की जा सकती हैं जिनमें लाखों लोग बहुत वर्षों तक काम में लगाये जा सकते हैं। काम में लगे लोगों को बिना अतिरिक्त निधि के प्रशिक्षित कर अच्छे नागरिक बनाया जा सकता है। उनमें नैतिकता, आशा और उत्साह का संचार किया जा सकता है। अगर पत्नी को काम के लिये अनाज और पति को नगद मजदूरी दी जाय तो सौ दिन के बाद उनके पास एक हजार से अधिक रुपया और अगले एक महीना खाने के लिये अन्न की बचत हो सकती है। अनेक निर्माण कार्य के लिये ईंट की आवश्यकता हो रही है। अगर शिक्षित बेरोजगार युवक को पूंजी देकर ईंट भट्टा उद्योग में लगाया जाय तो आठ-नौ लाख रुपए में कम से कम दस शिक्षित परिवार और दो सौ मजदूर परिवार गरीबी रेखा पार कर सकते हैं। **धरम पासवान,**

ग्राम+पो० रानी, बेगूसराय (बिहार)

सेक्युलर कौन है?

महोदया, देश के अनेक राजनैतिक दल सेक्युलरिज्म की रक्षा के नाम पर भाजपा को सत्ता में नहीं आने देने के लिए जी जान से प्रयत्न कर रहे हैं। सच्ची धर्मनिरपेक्षता या सेक्युलरिज्म का अर्थ है कि विदेशों की तरह भारत में भी बहुसंख्य व अल्पसंख्यक के बीच कोई भेद न माना जाय तथा किसी का पक्ष न लिया जाय। इसलिये राष्ट्रवादी संस्था भाजपा के अनुसार हिन्दू-मुसलमान और ईसाई सभी इस देश के समान नागरिक हैं उनके बीच में कोई भी भेद उत्पन्न करने वाली बात ही वास्तविक साम्प्रदायिकता है। अंग्रेज सरकार हिन्दू मुसलमानों में भेद उत्पन्न करके राज्य करने के लिये मुसलमानों का झूठा पक्ष लेती रही यही काम सेक्युलरवादी दल ४७ वर्ष से करके हिन्दू-मुस्लिम भेद को निरंतर बढ़ाते जा रहे हैं। सोमनाथ मन्दिर बनने के समय में मुसलमानों ने कोई विरोध नहीं किया था।

इसी तरह राष्ट्रवादी मुसलमान स्थाई रूप से आपसी मतभेद मिटाने के लिये हिन्दुओं को राम जन्मभूमि देने के पक्ष में थे पर नकली सेक्युलर नेताओं ने अंग्रेजों की 'फूट डालो राज्य करो' की नीति पर चलकर कट्टरपंथियों को भड़काया

(शेष पृष्ठ १० पर)

वेद विचार

परमेश्वर का नाम तथा स्वयं प्रोक्त सात मन्त्र

❑ मनोहर विद्यालंकार

परमेश्वर या परमात्मा

वेद के लगभग १६ या २० हजार मन्त्रों में परमेश्वर या परमात्मा शब्द एक बार भी प्रयुक्त नहीं हुआ है, फिर भी आम भाषा में उस 'एकं सत्' को इन्हीं नामों से जाना व पुकारा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वेद में प्रयुक्त 'आत्मा' शब्द जो जीवात्मा और परमात्मा दोनों के लिये प्रयुक्त होता है, से ही ज्येष्ठ ब्रह्म या महान् पुरुष को देखकर परमात्मा और परमेश्वर की कल्पना कर ली गई है।

ओम् :– नाम जप में परमात्मा के लिये सबसे अधिक ओम् शब्द का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि यजुर्वेद में 'ओम्' शब्द का तीन बार प्रयोग हुआ है किन्तु वह उपसर्गवत् प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है। कुछ विद्वान् वेद मन्त्रों में प्रयुक्त 'उ' अक्षर को पदपाठ में 'ॐ' लिखा देखकर इसे ओम्=ॐ या ब्रह्म का प्रतिपादक मानते हैं। और 'उ' या 'ॐ' के अव्यय होने से।

देवतावाची नाम :– वेद में प्रयुक्त देवतावाची प्रायः सारे शब्द, परमात्मा के किसी गुण कर्म या स्वभाव का वर्णन करने के कारण, उसी के नाम हैं। प्रकरणवश उन सबका अर्थ परमात्मा किया जा सकता है। प्रमाण के लिये देखिये– **स नः पिता जनिता स उत बन्धुर्धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यो देवानां नामध एक एव तं सं प्रश्नं भुवना यन्ति सर्वा॥** अथर्व० २/१/३ **ऋषि बेनः। देवत–ब्रह्म, आत्मा। छन्दः–जगती।** इस मन्त्र में स्पष्ट रूप से कहा है कि देवताओं के नाम से केवल उसका ही ग्रहण होता। वही सर्वस हमारा उत्पादक रक्षक व बन्धु है।

परमात्मा का वैदिक नाम अग्नि :– वेद का बार-बार पारायण करने वालों की राय है कि परमात्मा के लिये सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला अग्नि शब्द वेद में परमात्मा का प्रमुख नाम है। प्रमाण के लिये उद्धृत हैं, निम्न मन्त्र– (१) **वाचमिव वक्तरि भुवनेष्ठा धास्युरेष नन्वेषो अग्निः।** अथर्व २/१/४। वक्ता में वाणी की तरह यह अग्नि सब भुवनों में स्थित होकर इनका धारण कर रहा है। यह निश्चित रूप से अग्नि ही है। (२) **इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्। एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति, अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः॥** ऋक् १.१६४.४६ **ऋषिः दीर्घतमा। देवता सूर्यः। छन्दः त्रिष्टुप।** इस मन्त्र में स्पष्ट वर्णन है कि वह 'एकं सद्' है विप्रजन उसे बहुत नामों से वर्णन करते हैं। उस अग्नि को ही इन्द्र, मित्र, वरुण और सुपर्ण कहते हैं तथा उसी अग्नि को यम और मातरिश्वा कहते हैं। इसमें 'अग्निमाहुः' दो बार कहने से प्रतीत होता है कि वेद को परमात्मा के मुख्यनाम के रूप में अग्नि इष्ट है इस मन्त्र का देवता भी 'अग्नि' होना चाहिए, याने उसका अर्थ सूर्य कर लिया जाए। (३) **अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा। अजस्रो धर्मो हविरस्मिनाम॥** ऋक् ३.२६.७। इस मन्त्र का देवता ब्रह्म, अग्निर्वा दिया है जिससे स्पष्ट है कि वेद को परमात्मा के प्रमुख नाम 'ब्रह्म' और 'अग्नि' इष्ट हैं।

परमेश्वर की स्तुति के लिये उपयुक्त नाम

यजुर्वेद के ४०वें अध्याय के अन्त में **योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओं खं ब्रह्म॥'** से ऐसा लगता है कि योगदर्शन में प्रतिपादित **'क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।** १.६९ ही यह पुरुष है। यह पुरुष विशेष 'ओम्' (१) आकाश की तरह अहम् (अहव्याप्तौ) सर्वव्यापक तथा आकाश की तरह ब्रह्म (बृहिवृद्धौ) सर्ववृहत् तथा सर्वत्र व्याप्त है। इसलिए हमारी दृष्टि में परमेश्वर की स्तुति के लिये सर्वोत्तम नाम– ओम्, ब्रह्म, सोऽहम्, पुरुषोत्तम और परमेश्वर है। किन्तु सबके लिये इनकी बाध्यता नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि, श्रद्धा और कल्पना के अनुसार परमेश्वर की चाहे जिस नाम से स्तुति कर सकता है, बस मन से परमेश्वर की स्तुति करे, किसी ऐतिहासिक व्यक्ति की नहीं

भारतीय परम्परा के अनुसार सम्पूर्ण वेद संहिता अपौरुषेय अर्थात् योगदर्शन के पुरुष विशेष द्वारा प्रोक्त तथा जगत् में मानव सृष्टि उत्पन्न होने से पूर्व की है। यहां उन मन्त्रों में से पुरुष विशेष परमेश्वर द्वारा 'अहम्' कह कर अन्य देवताओं के नाम से स्वयं प्रोक्त सात मन्त्रों का अर्थ सहित उल्लेख किया है।

मैं ही सब कुछ (सर्व) हूं, मुझे जानो

(१) **अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्रः।**

अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यतामा॥ ऋक् ४. २६.१। ऋषिः वामदेवः। देवता इन्द्रः। छन्दः पङ्क्तिः ।

शब्दार्थ— (अहम्) सर्वव्यापक मैं (मनुः) मननशील (ऋषिः) क्रान्तद्रष्टा (विप्रः) मेधावी होने से सर्वविद्यामय वेद का विज्ञापक ऋषि हूं। (अहम्) सर्वब्रह्म मैं (सूर्यः) सर्वोत्पादक तथा प्रकाशक (कक्षीवान्) सब सृष्टि कक्षाओं का उत्पादक व धारक हूं। मैं ही (आर्जुनेयं कुत्सम्) सरल माता-पिता के कुछ भी करने के इच्छुक पुत्र को अथवा कुत्सित होते हुए भी सरल व शुभ मार्ग पर चलने के इच्छुक पुत्र को (नि ऋञ्जे) नितरां कर्म करने के लिए प्रसाधित (प्रशिक्षित) कर देता हूं। इस प्रकार (च) चन्द्र के समान सर्वाह्लादक और (उशना) सर्वहितकामी होने के साथ (कविः) क्रान्तदर्शी अर्थात् त्रिकालज्ञाता हूं। (पश्यतमा) अपनी अन्तः चक्षु से मुझे देखो—ऐसा अनुभव करो। अहम्—अहम् 'अहव्याप्तौ' ओं खं ब्रह्म। यजु० ४०.१७। कुत्सः निन्दितः स्वा० द०, करोतीति कृ+सप्रत्यय=कुत्सः =कर्ता वैदिक कोष स्वामी दयानन्द के भाष्य पर आधारित अर्थ। स्वामी जी ने एकर्षि का अर्थ ईश्वर किया है।

मैं सुकर्ता व दानी (आर्य) को आश्रय व अवसर देता हूं

(२) अहं भूमिमददामार्य्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय। अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनुकेतमायन्॥ ऋक् ४.२६.२ ऋषिः वामदेवः। इन्द्रः। छन्दः भुरिक् पङ्क्तिः।

शब्दार्थ—(अहम्) उत्तम पदार्थ प्रदाता, ऐश्वर्यशाली मैं (आर्य्याय) क्रियाशील तथा ईश्वर पुत्रवत् आचरण करने वाले व्यक्ति को (भूमिं अददाम्) भूमि अथवा कर्म फलानुसार कार्य करने के आधारभूत अवसर प्रदान करता हूं। (अहम्) सर्वाधार मैं (दाशुषे मर्त्याय) किसी भी रूप में दूसरों को सहायता प्रदाता मनुष्य पर (वृष्टिं अपः अनयम्) आवश्यक पदार्थों की वर्षा तथा जीवन-यापन के लिये प्राणों व कार्य सामर्थ्य को प्राप्त कराता हूं। (वावशानाः देवाः) देव बनने की कामना वाले मनुष्य (ममकेतंअनुआयन्) मेरे द्वारा प्रदत्त सान द्वारा मेरे संकल्प का अनुकरण करते हैं। अपः कर्मनाम। निः० १.१२ अपः प्राणान्वायून्वा स्वा० दया०। आर्यः ईश्वर पुत्रः केतम् प्रज्ञानाम नि० ३-९ प्रज्ञानम् स्वा० दया०; संकल्पम्। सायण।

मैं ही उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय करता हूँ।

(३) अहं ता विश्वा चकरं नकिर्मा दैव्यं सहो वरते अप्रतीतम्। यन्मा सोमासो ममदन् यदुक्थोभे भयेते रजसी अपारे॥ ऋक्० ४.४२.६ ऋषिः। त्रसदस्युः पौरुकुत्स्यः। आत्मा। त्रिष्टुप।

(अहम्) दस्युओं को त्रस्त करने वाला सृष्टिकर्ता मैं परमात्मा (विश्वाचकरम्) सृष्टि के सब (काम उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय) करता हूं। इस कार्य में (अप्रतीतम्) अनुपम, अजेय या अतुल बल (दैव्यं सहः) अथवा कोई भी देव सम्बन्धी दिव्य बल (मा नकिः वरते) मुझे नहीं रोक सकता—मेरे काम में कोई अड़चन नहीं डाल सकता। (उभे रजसी) दोनों द्यावा पृथिवी और उनमें रहने वाले प्राणी (उक्थे अपारे) जो वर्णनीयता अपरिमित हैं (भयेते) सृष्टि व्यवस्था में विघ्न डालने से डरते हैं। (यत्) इसलिये (सोमासः) ऐश्वर्यशाली और सौम्यजन (मा ममदन्) मेरे प्रत्येक कार्य में सन्तुष्ट रहते हैं और परिणामतः मुझे प्रसन्न रखते हैं। त्रसदस्युः त्रसन्ति दस्यवोयस्मात्।

मैं सदा, सर्वत्र उपस्थित हूं, जब और जहाँ चाहो देख सकते हो

(४) अयमस्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि महना। ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि॥ ऋक् ८.१००.४ ऋषिः नृमेधः। देवता इन्द्रः। छन्दः निचृद्बृहती।

शब्दार्थ— हे (जरितः) स्तोता! (मा इह पश्य) मुझे तू जहां है, वहीं देख=अनुभव कर, क्योंकि मैं अपनी (महना) महिमा द्वारा (विश्वाजातानि) उत्पन्न हुए सभी प्राणियों और पदार्थों को (अभ्यस्मि) अभिभूत किये हुए हूँ। (ऋतस्य) अटल और यक्षीय नियमों व कर्मों के (प्रदिशः) उपदेष्टा लोग (मा वर्धयन्ति) मेरे महत्त्व को प्रदर्शित करके मुझे सदा बढ़ाते रहते हैं। (आदर्दिरः) आदरयोग्य मैं (भुवना) सभी भुवनों और व्यवस्था के भंजक शत्रु भूत लोगों को मैं (दर्दरीमि) विदारण करके दर-दर का भिखारी बना देता हूं। इह की व्याख्या करते हुए भगवद्गीता में कहा गया है— **यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेववा। तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसंभवम्॥ अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन। विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥** १०-४२ जगत् में जो भी पदार्थ वैभव, शोभाया ऊर्जा से युक्त दिखता है, उसे तू मेरे तेज के अंश से उत्पन्न समझ और मुझे चाहे जिस पदार्थ या प्राणी में अनुभव द्वारा देख ले।

मैं सकल ऐश्वर्य का पूर्ण स्वामी तथा विजेता हूँ

(५) अहं भुव वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि सं जयामि शश्वतः। मां हवन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे वि भजामि भोजनम्॥ ऋक् १०.४८.१ ऋषिः वैकुण्ठ इन्द्रः। देवता इन्द्रः। छन्दाः जगती।

शब्दार्थ— (अहम्) जीवों का सान देने वाला ऐश्वर्यमय मैं परमात्मा (वसुनः पूर्व्यपतिः) जगत् को बसाने योग्य बनाने वाले सब वसुधनों का असाधारण तथा शाश्वत स्वामी हूं। (अहम्) शत्रुविदाक मैं इन्द्र (शश्वतः) सहस्रों शत्रुओं के (धनानि

संजयामि) जीवन को धन्य बनाने वाले भावों और पदार्थों को जीत कर उन्हें कंगाल सा बना देता हूं। (जन्तवः पितरं न मां हवन्ते) किसी भी विपत्ति आने पर जैसे पुत्र पिता को याद करते हैं, वैसे ही सब प्राणी विपत्ति आने पर मुझे पुकारते हैं। मैं (दाशुषे) दूसरों की सहायता रूप में मुझे देने वालों को सब भोग्य पदार्थ देता रहता हूं। शश्वतः—शश्वत्, शतंसहस्रम् बहुनाम। नि० ३.१ पूर्व्यः—पूर्व्य पुराण नाम। नि. ३.२९।

मैं दानियों का भोजन तथा भोगियों का भक्षक हूं

(६) अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य नाम। यो मा ददाति स इदेवमावत्, अहमन्नम्, अन्नमदन्तमिद्धि॥ साम. ऋषिः—आत्मा। देवता—अन्नम्। छन्दः—त्रिष्टुप।

शब्दार्थ— (अहम्) मैं परमात्मा (ऋतस्य) सत्यज्ञान प्रदात्ता वेद का (प्रथमजाः) सर्वप्रथम उत्पादक हूं (देवेभ्यः पूर्वम्) सनातन काल से सब देवों से पहले विद्यमान हूं (अमृतस्य नाम) अमृतनाम से व्यवहृत जीवन, दीर्घायुष्य, सन्तान, कीर्ति, धन, ब्रह्मवर्चस् तथा मोक्ष का नाम=नमयिता=प्रदाता हूं। (यः मा ददाति) जो मेरे निमित्त दूसरों को देता है, (स इद्) वह ही (एवम्) इस कारण से (आवत्) अपनी रक्षा करता विषय वासनाओं से; और प्रगति करता है सब क्षेत्रों में; और मुझे प्राप्त हो जाता है, उसे कुछ प्राप्तव्य नहीं रहता; क्योंकि (अहमन्नम्) मैं उसके लिये आध्यात्मिक अन्न बन जाता हूं। वह मेरा उपासक बन कर मेरा ही सेवन करता है। इसके विपरीत (अन्नमदनाम्) प्राकृतिक भोगों को स्वादपूर्वक भोगने वालों को (अद्मि) मैं खा जाता हूं— अर्थात् वे विषय भोगों के चक्र में ही फंसे रहते हैं और विनाश को प्राप्त होते हैं। आवत्—अव—रक्षण, गति, प्राप्तिषु। अन्नम्-अत्ति, अद्यते वा। अन्नमदन्तम्—'तयोरन्यः पिप्पलं स्वादु अत्ति' तम्। ऋक् १.१६४.२०

मैं सबको उनके कर्मानुकूल भूमिका प्रदान करता हूं

(७) अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः। यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्॥ ऋक् १०.१२५.५ वागाम्भृणी-ऋषिः। आत्मा-देवता। छन्द-त्रिष्टुप्।

शब्दार्थ— (अहम्) महती वेदवाणी का प्रवक्ता मैं परमात्मा (स्वयं इदं वदामि) इस तथ्य को स्वयं बता रहा हूं; यह तथ्य (देवेभिः उतमानुषेभिः जुष्टम्) दिव्य गुणों से सम्पन्न तथा मननशील मनुष्यों द्वारा पूरी तरह स्वीकृत है। वह तथ्य निम्न है कि— मनुष्यों के कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त स्वभाव के अनुसार ही उनमें से किसी को (उग्रम्) उग्र कर्मा, किसी को (ब्रह्मणम्) ज्ञानार्जन में प्रवृत्त, किसी को (ऋषिम्) क्रान्तदर्शी और किसी को (सुमेधाम्) शोभन प्रज्ञावान् अथवा प्रत्येक क्षेत्र के लिये आवश्यक धारण सामर्थ्य से युक्त बनाता हूं। वागाम्भृणी वाक्+आ+अभृणी, अभृणः महन्नाम। नि० ३.३

प्रत्येक प्राणी मेरे आश्रय में कर्मानुसार फल भोगता है

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम्। अमन्तवो मां त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि॥ ऋक् १०.१२५.४ वागाम्भृवी-ऋषिः। आत्मा-देवता। छन्दः-त्रिष्टुप।

शब्दार्थ— जो भी प्राणी अन्न खाता है, या देखता है और जो मेरे द्वारा कथन किये वचन सुनता है, वे सब मेरे द्वारा प्रदत्त भोजन ही खाते हैं। (श्रुत) हे विख्यात मित्र जीव (श्रुधि) मेरे कथन को श्रद्धापूर्वक सुन। (श्रद्धिवं वदामि ते) तुझे श्रद्धा तथा प्रयत्न से प्राप्य ब्रह्म के सम्बन्ध में बता रहा हूं। (अमन्तवः माम्) जो मुझे नहीं मानते या जानना नहीं चाहते (ते) वे भी (मां उपक्षियन्ति) मेरे द्वारा प्रदत्त साधनों से ही इस जगत् में जीते हैं। किन्तु यदि वे नास्तिक होने के साथ दुराचारी, दुष्कृत, अत्रि या धातुधान बन जाते हैं तो (ते क्षियन्ति) वे क्षीण होकर नष्ट हो जाते हैं। उनकी बदनामी होती है, उन्हें कोई आदर पूर्वक स्मरण नहीं करता। उपक्षियन्ति-क्षि निवासगत्योः, क्षि क्षये, क्षियति-क्षयति। इन्द्रस्य युज्यः सखा।

५२२ कटरा ईश्वर भवन, खारी बावली, दिल्ली

(पृष्ठ ७ का शेष)

और हिन्दू-मुस्लिम मित्रता का एक सुनहरा अवसर जान-बूझकर गंवा दिया गया।

सच्चे सेक्युलरिज्म का अर्थ यह है कि दोनों संप्रदायों में दिखावटी मित्रता के बजाय स्थाई सद्भाव उत्पन्न हो तथा दोनों की उन्नति हो पर यहां तो ४७ वर्ष से हर अवसर पर आपसी घृणा और भेद बढ़ाया गया अन्यथा जिस तरह इंडोनेशिया व मलेशिया में मुसलमान हर वर्ष रामलीला करते हैं वैसा भारत में क्यों नहीं हो सकता था। बंगला देश से लाखों घुसपैठियों को आने दिया गया। देश की सबसे बड़ी समस्या बढ़ती हुई आबादी को रोकना है पर कट्टरपंथियों के तुष्टीकरण के लिये उसे नहीं रोका गया। हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन तथा कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था की आधार गाय की अंधाधुंध हत्या को नहीं रोका गया, इससे ४७ वर्षों में हमेशा साम्प्रदायिक तनाव व दंगे होते रहे। काश्मीर और आसाम की समस्याओं की जड़ ये नकली सेक्युलरिज्म है। **आनन्द शंकर पंड्या,**

प्लीजेन्ट प्लेस, नारायण डामोलकर मार्ग, मुम्बई

महर्षि दयानन्द और युगान्तर

❑ सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

उन्नीसवीं सदी का परार्द्ध भारत के इतिहास का अपर स्वर्ण प्रभात है। कई पावन चरित्र महापुरुष अलग-अलग उत्तरदायित्व लेकर, इस समय, इस पुण्य भूमि में अवतीर्ण होते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती भी इन्हीं में एक महाप्रतिभामंडित महापुरुष हैं।

हम देखते हैं, हमें इतिहास भी बतलाता है, समय की एक आवश्यकता होती है। उसी के अनुसार धर्म अपना स्वरूप ग्रहण करता है। हम अच्छी तरह जानते हैं, ज्ञान सदा एकरस है, वह काल के बन्धन से बाहर है; और चूंकि वेदों में मनुष्य जाति की प्रथम तथा चिरंतन ज्ञान ज्योति स्थित है, इसलिए उसके परिवर्तन की आवश्यकता सिद्ध नहीं होती, बल्कि परिवर्तन भ्रमजन्य भी कहा जा सकता है। पर साथ-साथ इसी प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि उच्चतम ज्ञान किसी भी भाषा में हो वह अपौरुषेय वेद ही है। परिवर्तन उसके व्यवहार कौशल, कर्मकाण्ड आदि में होता है, हुआ भी है। इसे ही हम समय की आवश्यकता कहते हैं। भाषा जिस प्रकार अर्थ साम्य रखने पर भी स्वरूपतः बदलती गई है, अथवा भिन्न देशों में, विभिन्न परिस्थतियों के कारण अपर देशों की भाषा से बिल्कुल भिन्न प्रतीत होती है, इसी प्रकार धर्म भी समयानुसार जुदा-जुदा रूप ग्रहण करता गया है। भारत के लिए यह विशेष रूप से कहा जा सकता है। बुद्ध, शंकर, रामानुज आदि के धर्ममत प्रवर्त्तन, सामयिक प्रभाव को ही पुष्ट करते हैं। पुराण इसी विशेषता के सूचक हैं। पौराणिक विशेषता और मूर्ति पूजन आदि से मालूम होता है, देश के लोगों की रुचि अरूप से रूप की ओर ज्यादा झुकी थी। इसीलिए वैदिक अखंड ज्ञान-राशि को छोड़कर ऐश्वर्यगुणपूर्ण एक-एक प्रतीक लोगों ने ग्रहण किया। इस तरह देश की तरक्की नहीं हुई, यह बात नहीं। पर इस तरह देश ज्ञान-भूमि से गिर गया, यह बात भी नहीं है। जो भोजन शरीर को पुष्ट करता है, वही रोग का भी कारण होता है। मूर्ति पूजन में इसी प्रकार दोषों का प्रवेश हुआ। ज्ञान जाता रहा। मस्तिष्क से दुर्बल हुई जाति औद्धत्य के कारण छोटी-छोटी स्वतंत्र सत्ताओं में बंटकर एक दिन शताब्दियों के लिए पराधीन हो गई। उसका वह मूर्ति पूजन संस्कार बढ़ता गया, धीरे-धीरे वह ज्ञान से बिल्कुल ही रहित हो गई। शासन बदला, अंग्रेज आए। संसार की सभ्यता एक नये प्रवाह से बही। बड़े-बड़े पंडित विश्व साहित्य, विश्व ज्ञान, विश्व मैत्री की आवाज उठाने लगे; पर भारत उसी प्रकार पौराणिक रूप के मायाजाल में भूला रहा। इस समय ज्ञान स्पर्धा के लिए समय को फिर आवश्यकता हुई और महर्षि दयानन्द का यही अपराजित प्रकाश है। वह अपार वैदिक ज्ञान राशि के आधार स्तम्भ स्वरूप अकेले बड़े-बड़े पंडितों का सामना करते हैं। एक ही आधार से इतनी बड़ी शक्ति का स्फुरण होता है कि आज भारत के युगान्तर साहित्य में इसी की सत्ता प्रथम है, यही जनसंख्या में बढ़ी हुई है।

चरित्र, स्वास्थ्य, त्याग, ज्ञान और शिष्टता आदि में जो आदर्श महर्षि दयानन्द जी महाराज में प्राप्त होते है।, उनका लेशमात्र भी अभारतीय पश्चिमी शिक्षा संभूत नहीं; पुनः ऐसे आर्य में ज्ञान तथा कर्म का कितना प्रसार रह सकता है, वह स्वयं इसके उदाहरण हैं। मतलब यह है कि जो लोग कहते हैं कि वैदिक अथवा प्राचीन शिक्षा द्वारा मनुष्य उतना उन्नतमना नहीं हो सकता, जितना अंग्रेजी शिक्षा द्वारा होता है, महर्षि दयानन्द सरस्वती इसके प्रत्यक्ष खंडनकर्ता हैं। महर्षि दयानन्द जी से बढ़कर भी मनुष्य होता है, इसका प्रमाण प्राप्त नहीं हो सकता। यही वैदिक ज्ञान की मनुष्य के उत्कर्ष में प्रत्यक्ष उपलब्धि होती हैं, यहीं आदर्श आर्य हमें देखने को मिलता है।

यहां से भारत के धार्मिक इतिहास का एक नया अध्याय शुरू होता है, यद्यपि वह बहुत ही प्राचीन है। हमें अपने सुधार के लिए क्या-क्या करना चाहिए, हमारे सामाजिक उन्नयन में कहां-कहां और क्या-क्या रुकावटें हैं, हमें मुक्ति के लिए कौन-सा मार्ग ग्रहण करना चाहिए, महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बहुत अच्छी तरह समझाया है। आर्य समाज की प्रतिष्ठा भारतीयों में एक नये जीवन की प्रतिष्ठा है, उसकी प्रगति एक दिव्य शक्ति की स्फूर्ति है। देश में महिलाओं, पतितों तथा जातिपांति के भेदभाव मिटाने के लिए महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज से बढ़कर इस नवीन विचारों के युग में किसी भी समाज ने कार्य

नहीं किया। आज जो जागरण भारत में दीख पड़ता है, उसका प्रायः सम्पूर्ण श्रेय आर्य समाज को है। स्वधर्म में दीक्षित करने का यहां इसी समाज से श्रीगणेश हुआ है। भिन्न जाति वाले बन्धुओं को उठाने तथा ब्राह्मण, क्षत्रियों के प्रहारों से बचने का उद्यम आर्यसमाज ही करता रहा है। शहर-शहर, जिले-जिले, कस्बे-कस्बे में इसी उदारता के कारण, आर्य समाज की स्थापना हो गई। राष्ट्रभाषा हिन्दी के भी स्वामी जी एक प्रवर्त्तक हैं, और आर्य समाज के प्रचार की तो यह भाषा ही रही है। अनेक गीत खिचड़ी शैली के तैयार किये और गाए गए। शिक्षण के लिए 'गुरुकुल' जैसे संस्थाएं निर्मित हो गई। एक नया ही जीवन देश में लहराने लगा।

स्वामी जी के प्रचार के कुछ पहले ब्रह्मसमाज की कलकत्ता में स्थापना हुई थी। राजा राममोहन राय द्वारा प्रवर्तित ब्रह्मधर्म की प्रतिष्ठा, वैदान्तिक बुनियाद पर महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर कर चुके थे। वहां इसकी आवश्यकता इसलिए हुई थी कि अंग्रेजी सभ्यता की दीप-ज्योति की ओर शिक्षित नवयुवकों का समूह पतंगों की तरह बढ़ रहा था, पुनः शिक्षा तथा उत्कर्ष के लिए विदेश की यात्रा अनिवार्य थी, पर लौटने पर वे शिक्षित युवक यहां ब्राह्मणों द्वारा धर्म भ्रष्ट कहकर समाज से निकाल दिये जाते थे, इसलिए वे ईसाई हो जाते थे, उन्हें देश के ही धर्म में रखने की जरूरत थी। इसी भावना पर ब्रह्मधर्म की प्रतिष्ठा का प्रसार हुआ। विलायत में प्रसिद्धि प्राप्त कर लौटने वाले प्रथम भारतीय वक्ता श्रीयुत केशवचन्द्र सेन भी ब्रह्मधर्म के प्रवर्त्तकों में एक हैं। इन्हीं से मिलने के लिए स्वामी जी कलकत्ता गए थे। यह जितने अच्छे विद्वान अंग्रेजी के थे, उतने अच्छे संस्कृत के न थे। इनसे बातचीत में स्वामी जी सहमत नहीं हो सके। कलकत्ता में आज ब्रह्मसमाज मन्दिर के सामने, कार्नवालिस स्ट्रीट पर विशाल आर्य समाज मन्दिर भी स्थित है।

किसी दूसरे प्रतिभाशाली पुरुष से और जो कुछ उपकार देश तथा जाति का हुआ हो सबसे पहले वेदों को स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने ही हमारे सामने रखा। हम आर्य हों, हिन्दू हों, ब्रह्मसमाज वाले हों, यदि हमें ऋषियों की सन्तान होने का सौभाग्य प्राप्त है और इसके लिए हम गर्व करते हैं, तो कहना होगा कि ऋषि दयानन्द से बढ़कर हमारा उपकार इधर किसी भी दूसरे महापुरुष ने नहीं किया, जिन्होंने स्वयं कुछ भी न लेकर हमें अपार ज्ञान राशि वेदों से परिचित कर दिया।

देश में विभिन्न मतों का प्रचलन उसके पतन का कारण है, स्वामी दयानन्द जी की यह निर्भ्रान्त धारणा थी। उन्होंने इन मत-मतान्तरों पर सप्रमाण प्रबल आक्षेप भी किये हैं। उनकी इच्छा थी कि इस मतवाद के अज्ञान पंक से देश को निकाल कर वैदिक शुद्ध शिक्षा द्वारा निष्कलंक कर दें। वाममार्ग वाले तांत्रिकों की मन्द वृत्तियों का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि मद्य, मांस, मीन, मुद्रा, मैथुन आदि वेद विरुद्ध महा अधर्म कार्यों को वाममार्गियों ने श्रेष्ठ माना है। जो वाममार्गी कलार के घर बोलत पर बोतल शराब चढ़ावे और रात्रि को वारांगना से दुष्कर्म करके उसी के घर सोवे, वह वाममार्गियों में सर्वश्रेष्ठ चक्रवर्ती राजा के समान है। स्त्रियों के प्रति विशद कोई भी विचार उनमें नहीं। स्वामी जी देशवासियों को विशुद्ध वैदिक धर्म में दीक्षित हो आत्मज्ञान ही सा उज्ज्वल और पवित्र कर देना चाहते थे। स्वामी विवेकानन्द ने भी वामाचार भक्त देश के लिए विशुद्ध भाव वाले वैदांतिक धर्म का उपदेश दिया है।

आपने गुरु परम्परा को भी आड़े हाथों लिया है। योगसूत्र से **'स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्'** के अनुसार आप केवल ब्रह्म को ही गुरु स्वीकार करते हैं। रामानुज जैसे धर्माचार्य का भी मत आपको मान्य नहीं, और बहुत कुछ युक्तिपूर्ण भी जान पड़ता है। आपका कहना है कि लक्ष्मी-युक्त नारायण की शरण जाने का मन्त्र धनाढ्य और माननीयों के लिए बनाया गया यह भी एक दुकान ठहरी।

मूर्ति पूजन के लिए आपका कथन है कि जैनियों की मूर्खता से इसका प्रचलन हुआ। तांत्रिक तथा वैष्णवों ने भिन्न मूर्तियों तथा पूजनोपचारों से अपनी एक विशेषता प्रतिष्ठित की हैं जैनी वाद्य नहीं बजाते थे, ये लोग शंख, घंटा, घड़ियाल आदि बजाने लगे। अवतार आदि पर भी स्वामी जी विश्वास नहीं करते। **'न तस्य प्रतिमा अस्ति'** आदि-आदि प्रमाणों से ब्रह्म का विग्रह नहीं सिद्ध होता उनका कहना है।

ब्राह्मणों की ठग विद्या के सम्बन्ध में भी स्वामीजी ने लिखा है। आज ब्राह्मणों की हठपूर्ण मूर्खता के अपरापर जातियों को क्षति पहुंच रही है। पहले पढ़े लिखे होने के कारण ब्राह्मणों ने श्लोकों की रचना कर-करके अपने लिए बहुत काफी गुंजाइश कर ली थी। उसी के परिणामस्वरूप वे आज तक पुजाते चले आ रहे हैं। स्वामी जी एक मन्त्र का उल्लेख करते हैं—

दैवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीनाश्च देवता।
ते मन्त्रा ब्राह्मणाधीनास्तस्माद्ब्राह्मणदैवतम्॥

अर्थात् सारा संसार देवताओं के अधीन है, देवता मंत्रों के अधीन हैं, वे मन्त्र ब्राह्मणों के अधीन हैं, इसलिए ब्राह्मण ही देवता हैं। लोगों से पुजाने का यह पाखंड बड़ी ही नीच मनोवृत्ति का परिचय है।

स्वामी जी ने शैव, शाक्त और वैष्णव आदि मतों की खबर तो ली ही है, हिन्दी साहित्य के महाकवि कबीर तथा दादू आदि को भी बहुत बुरी तरह फटकारा है। आपका कहना है— "पाषाणादि को छोड़ पलंग, गद्दी, तकिए, खड़ाऊं, ज्योति अर्थात् दीप आदि का पूजना पाषाण मूर्ति से न्यून नहीं। क्या कबीर साहब भुनगा था, वा कली था, जो फूल हो गया? जुलाहे का काम करता था, किसी पंडित के पास संस्कृत पढ़ने के लिए गया, उसने उसका अपमान किया। कहा, हम जुलाहे को नहीं पढ़ाते। इसी प्रकार कई पंडितों के पास फिरा परन्तु किसी ने न पढ़ाया, तब ऊटपटांग भाषा बनाकर जुलाहे आदि लोगों को समझाने लगा। तंबूरे लेकर गाता था, भजन बनाता था, विशेष पंडित, शास्त्र, वेदों की निन्दा किया करता था। कुछ मूर्ख लोग उसके जाल में फंस गए। जब मर गए तब सिद्ध बना लिया। जो-जो उसने जीते जी बनाया था, उसको उसके चेले पढ़ते रहे। कान को मूंदकर जो शब्द सुना जाता है उसको अनहद शब्द सिद्धान्त ठहराया। मन की वृत्ति को सुरति करते हैं, उसको उस शब्द के सुनने में लगाया, उसी को संत और परमेश्वर का ध्यान बतलाते हैं, वहां काल नहीं पहुंचता। बर्छी के समान तिलक और चंदनादि लकड़ी की कंठी बांधते हैं। भला विचार करके देखो, इसमें आत्मा की उन्नति और ज्ञान क्या बढ़ सकता है?"

इसी प्रकार नानक जी के सम्बन्ध में भी आपने कहा है कि उन्हें संस्कृत का ज्ञान न था, उन्होंने वेद पढ़ने वालों को तो मौत के मुंह में डाल दिया है और अपना नाम लेकर कहा है कि नानक अमर हो गए— वह आप परमेश्वर हैं। जो वेदों को कहानी कहता है, उसकी कुल बातें कहानियां है। मूर्ख साधु वेदों की महिमा नहीं जान सकते। यदि नानक जी वेदों का मान करते तो उनका अपना सम्प्रदाय न चलता, न वह गुरु बन सकते थे, क्योंकि संस्कृत नहीं पढ़ी थी, फिर दूसरों को पढ़ाकर शिष्य कैसे बनाते आदि-आदि। दादू पंथ को भी आप इसी प्रकार फटकारते हैं। शिक्षा, मार्जन तथा अपौरुषेय ज्ञान राशि वेदों का आपका पक्ष है। मत-मतान्तरों के स्वल्प जल में वह आत्मतर्पण नहीं करते। वहां उन्हें महत्ता नहीं दीख पड़ती। पुनः भाषा में अधूरी कविता करके ज्ञान का परिचय देने वाले अल्पाधार साधुओं से पंडित श्रेष्ठ स्वामी जी तृप्त भी कैसे हो सकते थे? इन अशिक्षित या अल्पशिक्षित साधुओं ने जिस प्रकार वेदों की निन्दा कर मूढ़ जनों में वेदों के प्रतिकूल विश्वास पैदा कर दिया था, उसी प्रकार नव्य युग के तपस्वी महर्षि ने भी उन सबको धता बताया और विज्ञों को ज्ञानमय कोष वेदों की शिक्षा के लिए आमंत्रित किया। स्वामी नारायण के मत के विषय पर आप कहते हैं— **'यादृशी शीतलादेवी तादृशो वाहनः खरः'** जैसे गुसाईं जी की धनहरणादि में विचित्र लीला है वैसी ही स्वामी नारायण की भी है।" माध्वमत के सम्बन्ध में आपका कथन है— "जैसे अन्यमतावलम्बी हैं वैसा ही माध्व भी है, क्योंकि ये भी चक्रांकित होते हैं, इनमें चक्रांकितों से इतना विशेष है कि रामानुजीय एक बार चक्रांकित होते हैं, और ये वर्ष-वर्ष फिर-फिर चक्रांकित होते जाते हैं; वे चक्रांकित कपाल में पीली रेखा और माध्व काली रेखा लगाते हैं। एक माध्व पंडित से किसी एक महात्मा का शास्त्रार्थ हुए था। (महात्मा) तुमने यह काली रेखा और चांदला (तिलक) क्यों लगाया? (शास्त्री) इसके लगाने से हम वैकुण्ठ को जायेंगे और श्रीकृष्ण का भी शरीर श्याम रंग था, इसलिए हम काला तिलक करते हैं। (महात्मा) जो काली रेखा और चांदला लगाने से वैकुण्ठ में जाते हों तो सब मुख काला कर लेओ तो कहां जाओगे?

स्वामी जी के व्यंग बड़े उपदेशपूर्ण हैं। आर्य संस्कृति के लिए आपने निःसहाय होकर भी दिग्विजय किया और उसकी समुचित प्रतिष्ठा की। स्वामी जी का सबसे बड़ा महत्त्व यह है कि उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा की ओर नहीं देखा, वेदों की प्रतिष्ठा की है। ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज के सम्बन्ध में आपका कहना है— "ब्राह्मण समाज और प्रार्थना समाज के नियम सर्वांश में अच्छे नहीं, क्योंकि वेदविद्याहीन लोगों की कल्पना सर्वथा सत्य क्योंकर हो सकती है? जो कुछ ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाजियों ने ईसाई मत में मिलने से थोथे मनुष्यों को बचाया और कुछ-कुछ पाषाण आदि मूर्ति पूजा से हटाया अन्य जाल ग्रंथों के फन्दे से भी कुछ बचाया इत्यादि अच्छी बातें हैं। परन्तु इन लोगों में स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है, ईसाइयों के आचरण बहुत से लिए हैं। खान-पान विवाहादि के नियम भी बदल गए हैं। अपने देश की प्रशंसा व पूर्वजों की बड़ाई करनी तो दूर रही, उसके स्थान में पेट-भर निन्दा करते हैं, व्याख्यानों में ईसाई आदि अंग्रेजों की प्रशंसा भरपेट करते हैं। ब्रह्मादि महर्षियों का नाम भी नहीं लेते प्रत्युत ऐसा कहते हैं कि बिना

अंग्रेजों के सृष्टि में आज पर्यन्त कोई भी विद्वान् नहीं हुआ, आर्यावर्त्ती लोग सदा से मूर्ख चले आए हैं उनकी उन्नति कभी नहीं हुई। वेदादिकों की प्रतिष्ठा तो दूर रही, परन्तु निन्दा करने में भी पृथक् नहीं रहते, ब्रह्म समाज के उद्देश्य की पुस्तक में साधुओं की संख्या में 'ईसा', 'मूसा', 'मुहम्मद', 'नानक' और 'चैतन्य' लिखे हैं, किसी ऋषि-महर्षि का नाम भी नहीं लिखा।

आज शिक्षित सभी मनुष्य जानते हैं, आज के अधःपतन का मुख्य कारण नारी जाति का पीछे रह जाना है, वह जीवन-संग्राम में पुरुष का साथ नहीं दे सकती, पहले से ऐसी निरवलम्ब कर दी जाती है कि उसमें कोई क्रियाशीलता नहीं रह जाती, पुरुष के न रहने पर सहारे के बिना तरह-तरह की तकलीफें झेलती हुई वह कभी-कभी दूसरे धर्म को स्वीकार कर लेती है आदि-आदि। पं० लक्ष्मण शास्त्री द्रविड़ जैसे पुराने और नए पंडित अनुकूल तर्क योजना करते हुए प्रमाण देते हुए यह नहीं मानते कि भारत की स्त्रियां उसके पराधीन काल में भी किसी तरह दूसरे देशों की स्त्रियों से उचित शिक्षा, आत्मोन्नति, गार्हस्थ्य सुख-विज्ञान, संस्कृति आदि में घटकर हैं। इसी तरह धर्म और जाति के सम्बन्ध में उनकी वाक्यावली, आज के अंग्रेजी शिक्षित युवकों को अधूरी जंचने पर भी निरपेक्ष समीक्षकों के विचार में मान्य ठहरती है। फिर भी, हमें यहां देखना है कि आजकल के नवयुवक समुदाय से महर्षि दयानन्द, अपनी वैदिक प्राचीनता लिये हुए भी, नवीन सहयोग कर सकते हैं या नहीं। इससे हमें मालूम होगा हमारे देश के ऋषि जो हजारों शताब्दियों पहले सत्य-साक्षात्कार कर चुके हैं, आज की नवीनता से ही नवीन हैं। क्योंकि सत्य वह है जो जितना ही पीछे है, उतना ही आगे भी; जो सबसे पहले दृष्टि के सामने है वही सबसे ज्यादा नवीन है।

ज्ञान की ही हद में सृष्टि की सारी बातें हैं। सृष्टि की अव्यक्त अवस्था भी ज्ञान है। स्वामी जी वेदाध्ययन में अधिकारी भेद नहीं रखते। वह सभी जातियों की बालिकाओं-विद्यार्थिनियों को वेदाध्ययन का अधिकार देते हैं। यहां यह स्पष्ट है कि ज्ञानमय कोष चाहे वह जड़ विज्ञान से सम्बन्ध रखता हो, धर्म-विज्ञान से नारियों के लिए युक्त है, वे सब प्रकार से आत्मोन्नति करने की अधिकारिणी हैं। इस विषय पर आप सत्यार्थ प्रकाश में एक मन्त्र उद्धृत करते हैं :

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।" यजु० अ० २६/२

"परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूं, वैसे तुम भी किया करो। यहां कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन-शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि स्मृत्यादि ग्रंथों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही को वेद के पढ़ने का अधिकार लिखा है, स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं (उत्तर) ब्रह्मराजन्याभ्याम् इत्यादि देखो, परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय, (आर्याय) वैश्य, (शूद्राय) शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्रियादि (आरणाय) और अति शूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है अर्थात् सब मनुष्यों को पढ़-पढ़ा और सुन-सुनाकर विज्ञान को बढ़ाके अच्छी बातों को ग्रहण और बुरी बातों को त्याग करके दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त हों। कहिए अब तुम्हारी बात माने वा परमेश्वर की? परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है। इतने पर भी जो कोई इसको न मानेगा, वह नास्तिक कहावेगा, क्योंकि 'नास्तिको वेद निन्दकः' वेदों का निन्दक और न मानने वाला नास्तिक कहाता है।

स्वामी जी ने वेद के उद्धरणों द्वारा सिद्ध किया है कि स्त्रियों की शिक्षा, अध्ययन आदि वेद-विहित है। उनके लिए ब्रह्मचर्य के पालन का भी विधान है। स्वामी जी की इस महत्ता को देखकर मालूम हो जाता है कि स्त्री समाज को उठाने वाले पश्चिमी शिक्षा प्राप्त पुरुषों से वह बहुत आगे बढ़े हुए हैं। वह संसार और मुक्ति दोनों प्रसंगों में पुरुषों के ही बराबर नारियों को अधिकार देते हैं। इस एक ही वाक्य से साबित होता है कि किसी भी दृष्टि से वह नारी जाति को पुरुष जाति से घटकर नहीं मानते।

आपका ही प्रवर्त्तन आर्यावर्त्त के अधिकांश भागों में, महिलाओं के अध्यापन के सम्बन्ध में प्रचलित है। यहां स्त्री शिक्षा विस्तार का अधिकांश श्रेय आर्य समाज को दिया जा सकता है। यहां की शिक्षा की एक विशेषता भी है। महिलाएं यहां जितने अंशों में देशी सभ्यता की ज्योति स्वरूपा होकर निकलती हैं, उतने अंशों में दूसरी जगह नहीं। संस्कृति के भीतर से स्त्री के रूप में प्राचीन संस्कृति को ही स्वामी जी ने सामने खड़ा कर दिया है। ❑

अमर हुतात्मा पंडित लेखराम जी

❑ देवीदास आर्य

अमर हुतात्मा धर्मवीर, आर्य पथिक श्री पं० लेखराम जी आर्य समाज के महान् नेता उच्चकोटि के विद्वान, सुप्रसिद्ध प्रचारक एवं शास्त्रार्थ महारथी थे। महर्षि स्वामी दयानन्द जी के बाद वह प्रथम महापुरुष थे जो धर्म की पवित्र वेदी पर बलिदान होकर अमर हो गये।

पंडित जी का जन्म ८ चैत्र सम्वत् १९१५ विक्रमी शुक्रवार के दिन श्री पंडित तारासिंह जी के घर सैदपुर ग्राम, तहसील चकवाल जिला जेहलम (पश्चिमी पंजाब) में हुआ था। ६ वर्ष की आयु में आपको अपने ग्राम की एक पाठशाला में प्रविष्ट करा दिया गया। आपके पूज्य चाचा पेशावर में पुलिस इन्सपैक्टर थे। जब आपकी आयु १७ वर्ष की हुई तो उन्होंने आपको २१.१२.१८७५ (पौष सम्वत् १९३२ विक्रमी) के दिन पेशावर पुलिस में भरती करवा दिया था। उन दिनों मिर्जा गुलाम अहमद कादयानी हिन्दुओं (विशेषकर आर्य समाज) के विरुद्ध बड़े विषैले लेख प्रकाशित किया करते थे और कई पुस्तकें भी लिख चुके थे। जब श्री पंडित जी ने उनकी पुस्तकें पढ़ीं तो उन्होंने उन पुस्तकों का युक्तियुक्त तथा संतोषजनक उत्तर देने का निश्चय कर लिया। इस शुभ कार्य की पूर्ति के लिए आप सर्वप्रथम महर्षि स्वामी दयानन्द के दर्शन करने के लिए अजमेर गये। १६ मई सन् १८८० ई० की रात्रि को आप अजमेर पहुंचे और १७ मई को सेठ फतेमल की वाटिका में महर्षि के दर्शन किए और उनका उपदेशामृत पान किया जिससे आपके सब संशय निवृत्त हो गये। महर्षि के प्रथम व अन्तिम बार दर्शन करने के पश्चात् आप पेशावर वापिस आ गये और नौकरी से त्याग पत्र देकर लाहौर पहुंच गये। कुछ काल तक आप फिरोजपुर में "आर्य गजट" के सम्पादक बनकर आर्य समाज की सेवा करते रहे। तत्पश्चात् आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक बन गये।

विद्वत्ता एवं योग्यता

पंडित जी ने छोटी-बड़ी ३३ पुस्तकें लिखीं। इन्हें छः भाषाओं अर्थात् हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फारसी, अरबी और गुरुमुखी का ज्ञान तो था, किन्तु वे अंग्रेजी नहीं जानते थे। स्वर्गीय मेहता जैमिनी जी के कथानानुसार अंग्रेजी न जाते हुए भी आपने अपनी पुस्तकों में २१३ अंग्रेजी पुस्तकों के प्रमाण दिये। आप प्रायः किसी अंग्रेजी पढ़े-लिखे व्यक्ति को अपने पास बिठा लेते और उन्हें अंग्रेजी की पुस्तकें देकर उनका अनुवाद सुनाया करते थे। जहां कहीं अपने काम की बात देखते उसे लिख लेते थे।

देखें "आर्य मुसाफिर" मार्च (१९३३ ई०) अमर हुतात्मा श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने पंडित जी के जीवन चरित्र "आर्य पथिक लेखराम" में उनकी विद्वत्ता योग्यता सम्बन्धी निम्न बाते लिखी हैं—

"पंडित लेखराम की यह पहली पुस्तक ऐसी जबरदस्त समझी गयी कि बहुत लोगों ने इसकी हस्तलिखित प्रतियां बड़ा व्यय करके प्राप्त कीं।" (पृ० ३८)

"तकजीब बुराहीन अहमदिया" का प्रथम भाग ठीक प्रबन्ध न होने से छप नहीं सकता था, परन्तु उसकी नकलें हो-हो कर दूर-दूर पहुंच चुकी थीं।"

"आप (पंडित जी) फरमाते थे कि मैंने २६ मनुस्मृतियां इकट्ठी की हैं और जो काश्मीर से मनुस्मृति हाथ लगी है वह बहुत ही नायाब (दुर्लभ) है।" (पृष्ठ ७३)

"यह पंडित लेखराम जी ने ही पता लगाया था कि ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य का आर्य भाषा में अनुवाद करते हुए ब्राह्मणकुलोत्पन्न पंडित अपने सिद्धान्त बीच में घुसेड़ कर भाष्य को संदिग्ध बना रहे हैं। परोपकारणी सभा ने यह निश्चय मुद्रित कराया कि "महर्षि दयानन्द कृत पुस्तकों के शोधने के लिए पंडित लेखराम जी को लिखा जावे कि वे अशुद्धियां छांट कर वैदिक यन्त्रालय के अधिष्ठाता के पास लिख भेजें।" (पृष्ठ १२०)

"जहां दूसरे वक्ताओं के एक घंटे के व्याख्यान के पश्चात् श्रोता घबरा जाते हैं वहां तीन घंटों तक आर्य पथिक की वक्तृता सुनने के पश्चात भी एक घंटा और बैठने को तैयार रहते थे।"

महात्मा नारायण स्वामी जी का मत

पंडित जी व्याख्यान देते, शास्त्रार्थ करते और ऋषि का जीवन चरित्र तैयार करने के लिए लगातार यात्रा करते हुए

वैदिक धर्म की प्रतिरक्षा में इतनी सामग्री लेखों आदि के रूप में छोड़ गये हैं कि आश्चर्य चकित होना पड़ता है और भी इतनी विद्वत्तापूर्ण कि अच्छे-अच्छे विद्वानों की बुद्धि चक्कर खा जाती है। ("आर्य मुसाफिर" मार्च १९३२)

न्यायालयों के निर्णय

विधर्मी जब उनकी पुस्तकों का उत्तर न दे सके तो वे तुच्छ तथा ओछे हथियारों पर उतर आये और बार-बार न्यायालयों के द्वार खटखटा कर पंडित जी पर पहले मिर्जापुर, फिर प्रयाग, लाहौर, देहली और बम्बई में अभियोग चलाये जो सब पंडित जी को बिन बुलाय ही खारिज हो गये। वे मेरठ, अमृतसर और पेशावर में भी अभियोग चलाना चाहते थे, किन्तु वकीलों ने अनुमति न दी। दिल्ली के तत्कालीन मुख्यायुक्त श्री कैप्टन डेविड ने अपने निर्णय में लिखा था 'पंडित लेखराम की कथन शैली ऐसी अनोखी है कि वह भी स्वतः दूसरों पर आक्षेप नहीं करते और उत्तर भी इतने उचित होते हैं कि कानून के पंजे में तो आना दूर रहा हर न्यायप्रिय व्यक्ति को इनकी प्रशंसा करनी पड़ती है। मैं विश्वास करता हूं कि पंडित लेखराम के विरुद्ध कोई भी अभियोग सिद्ध नहीं किया गया। अतः अभियोग को भारतीय दंड विधान की धारा २०३ के अनुसार खारिज करता हूं।" इसी प्रकार पंजाब पुलिस के सुपरिन्टेंडेंट श्री किस्टी साहब ने कहा था कि सरकार की तरफ से २, ३ बार मुसलमानों की शिकायत पर पंडित लेखराम की कृतियों की पड़ताल कराई गई परन्तु प्रत्येक बार यही परिणाम निकाला गया कि इनके लेखों में कोई बात ऐसी नहीं जिससे वे पकड़ में आ सकें। हाँ इन लेखों का लेखक अपने धर्म का उत्साह से भरपूर रक्षक नजर आता है।"

मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी पर प्रभाव

पंडित जी ने अधिकतर पुस्तकें मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी की पुस्तकों के उत्तर में लिखी थीं। मिर्जा ने पहले लिखा था कि वेद किसी लाहोर या मेमार (राज.) के पुराने विचार हैं।' 'वेद नास्तिक मत के समर्थक हैं' वेद ईश्वरीय गुणों के विरोधी हैं, आर्यों की बुद्धि को धर्मान्धता ने ले लिया और उनकी आंखें ईर्ष्या और द्वेष के कारण जाती रहीं, अब इस प्रकाश युग में वेदों को ईश्वर का ज्ञान बनाना चाहते हैं इत्यादि।

पंडित जी की पुस्तकें पढ़ने के पश्चात् मिर्जा के वेद सम्बन्धी विचार परिवर्तित हो गये। अतः मरने से पूर्व मिर्जा ने एक और पुस्तक 'पैगामे-सुलह' (सन्धि का सन्देश) नामक लिखी जिसमें वेद सम्बन्धी विचार व्यक्त किये—

'वेद मनुष्यकृत नहीं क्योंकि मनुष्यकृत पुस्तकों में यह आकर्षण शक्ति नहीं होती कि सदा के लिए करोड़ों व्यक्तियों को अपनी ओर खींच सके। बस हमारे सम्मुख वेद की सत्यता की यह एक युक्ति पर्याप्त है कि आर्यावर्त्त के कई करोड़ व्यक्ति हजारों वर्षों से इसे ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं जो कुछ शिक्षा में मूल है वह वेद के भाष्यकारों की भूल समझते हैं। 'जितनी सच्ची शिक्षा इस्लाम में पाई जाती है वह वैदिक शिक्षा में विद्यमान है।' वेद ने कोई ऐसी शिक्षा नहीं दी जो बुद्धि के विरुद्ध हो या ईश्वर पर पक्षपात का आरोप लगाती हो।'

तप और त्याग

आर्य प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक के रूप में श्री पंडित जी को चिरकाल तक २५ रुपये मासिक वेतन मिलता रहा। जब आपका विवाह हो गया तो सभा ने स्वयं ३० रुपये मासिक देना आरम्भ कर दिया।

१७.६.१८९५ ई० को आपने 'सन लाइफ इंश्योरेन्स कम्पनी में अपने जीवन का २००० रुपये का बीमा करा दिया। तब श्री महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज) ने उनका वेतन ३५ रुपये मासिक करा दिया। जब यह समाचार पंडित जी को मिला तो आपने लिखा कि मेरी पत्नी व माता जी को ३० रुपये मासिक पर्याप्त है मुझे भोजन आर्य समाजों से मिल जाता है। अतः मुझे वेतन वृद्धि स्वीकार नहीं।

आपने वेतन वृद्धि के लिए कभी स्वयं प्रार्थना पत्र नहीं दिया। यदि आप सभा के अधीन न रहकर स्वतंत्र रूप में कार्य करते तो प्रतिमास सैकड़ों रुपये कमा सकते थे, किन्तु आप तो अपना तन, मन और धन अर्पण करने के लिए 'आर्य समाज' जैसी पवित्र संस्था में प्रविष्ट हुए थे। महात्मा जी ने 'आर्य पथिक लेखराम' नामक पुस्तक के पृष्ठ १७३ पर लिखा था 'जहां अन्य उपदेशक पूरे इक्के का किराया १ रुपया लगाते वहां आर्य पथिक के बिलों में उसी स्थान का किराया साढ़े तीन आने दर्ज होता।' जहां कुली के असबाब उठवाकर ले जाने में बचत होती वहां इक्का गाड़ी पर नहीं बैठते थे और यदि मार्ग में कहीं उतरने से अपना काम भी होता तो वहां का किराया सभा से न लेते।"

सन् १८९५ ई० में किसी निजी कार्य के लिए श्री

पंडित जी स्यालकोट गये। वहां दिन को अपना कार्य करते रहे और रात्रि को आर्य समाज में व्याख्यान देते रहे। तीन दिन के पश्चात् वापस लाहौर आये। आर्य समाज स्यालकोट ने आप को १५ रुपये मार्ग व्यय के रूप में दिये। आपने लाहौर पहुंच कर वे रुपये 'वेद प्रचार' में जमा करा दिये और सभा से रसीद लेकर मन्त्री समाज को भेज दी और लिखा कि मैं स्यालकोट निजी कार्य के लिए गया था। अतः मुझे समाज से किराया लेने का कोई अधिकार नहीं।

श्री पंडित जी के इस प्रकार के त्याग का ही प्रभाव था कि आपके स्वर्ग सिधारने पर आपकी धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवी जी ने बीमा के पूर्ण २००० रुपये गुरुकुल कांगड़ी को प्रदान कर दिये जिससे एक ब्रह्मचारी को गुरुकुल में निःशुल्क प्रविष्ट करा लिया गया। एक बार स्वर्गीय स्वामी समर्पणानन्द जी (श्री पंडित बुद्धदेव जी विद्यालंकार) ने थापर नगर आर्य समाज मेरठ में श्री पंडित लेखराम जी को श्रद्धांजलि अर्पित करते समय अपने व्याख्यान में यह कहा था कि उस २००० रुपये की धनराशि से आप ही गुरुकुल में निःशुल्क प्रविष्ट हुए थे। श्रीमती लक्ष्मी देवी जी धन्य हैं जिनकी कृपा से आर्य समाज को पंडित बुद्धदेव जी जैसा रत्न मिला।

एक बार जब महात्मा मुंशीराम जी आर्य समाज वजीराबाद के उत्सव पर गये हुए थे तो वहां उन्हें वह शोकजनक समाचार मिला कि पंडित जी का इकलौता बेटा सुदेव इस संसार से चल बसा है। अतः उस समय सबने यह समझा कि पंडित जी उत्सव पर नहीं आ सकेंगे, उनके आश्चर्य की कोई सीमा न रही जब थोड़ी देर के पश्चात् ही पंडित जी घर से सीधे वहां पहुंच गये।

इस सम्बन्ध में ८ मार्च सन् १९३५ ई० के 'आर्यवीर' जालन्धर के 'बलिदान अंक' में श्री स्वामी ज्ञानानन्द (मेहता जैमिनि) जी ने लिखा था कि मैं एक दिन सायंकाल को महात्मा मुन्शीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द) प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा के पास बैठा हुआ था कि पंडित जी कहीं से प्रचार करके वापिस आये। महात्मा जी ने पंडित जी से कहा कि मुस्तफाबाद से तार आया है कि वहां पांच हिन्दू मुसलमान बनने लगे हैं। किसी उपदेशक को शीघ्र भेजो। आपका पुत्र रोगग्रस्त है अतः आप जायें और उसकी देखभाल करें। मैं हकीम संतराम को यह तार देता हूं वे वहां चले जायेंगे। पंडित जी ने कहा कि ऐसे अवसर पर मेरा ही जाना आवश्यक है। मुझे अपने एक पुत्र से हिन्दू जाति के पांच अधिक प्यारे हैं। तार दें कि मैं सायंकाल को ७ बजे की गाड़ी से चला जाऊंगा। पंडित जी दो घंटों के लिए अपनी पत्नी व माता जी के पास गये। उन्हें सान्त्वना देकर आप चले आये और रात्रि की गाड़ी से मुस्तफाबाद पहुंच गये और उन पांच हिन्दुओं को मुसलमान होने से बचा लिया। उनकी अनुपस्थिति में डाक्टर गंगाराम जी ने भली-भांति पंडित जी के पुत्र की चिकित्सा की, किन्तु वह न बच सका। यह थी लगन व धुन। दो अन्य घटनाओं का उल्लेख करना भी अति आवश्यक है। घटनायें इस प्रकार हैं—

(१) आर्य समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा शास्त्रार्थ महारथी स्वर्गीय श्री पंडित रामचन्द्र जी देहलवी चांदनी चौक, दिल्ली में फव्वारे के समीप निरन्तर १५ वर्षों तक व्याख्यान देते थे। दो दिन मौलवी और दो दिन पादरी। सातवें दिन अवकाश हुआ करता था। एक दिन जब पंडित जी के व्याख्यान की बारी थी तो आपका इकलौता बेटा स्वर्ग सिधार गया जिसके कारण घर में हाहाकार मचा हुआ था, किन्तु पंडित जी की सहनशीलता देखिये कि उन्होंने उस दिन भी निश्चित समय पर पधार कर व्याख्यान दिया।

(२) दूसरी घटना श्री सांईदास जी (जो आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के सर्वप्रथम प्रधान थे) की एक पुत्री शनिवार की रात्रि को स्वर्गवास हो गई। उन दिनों आपका यह नियम था कि आप घर को ताला लगाकर परिवार सहित आर्यसमाज के सत्संग में सम्मिलित हुआ करते थे। अतः अगले दिन प्रातःकाल घर को ताला लगाकर आर्य समाज मन्दिर में पधारे और सत्संग की समाप्ति कर उनकी पुत्री के अन्त्येष्टि संस्कार का प्रबन्ध किया। आर्य समाज के ऐसे उच्चकोटि के त्यागी एवं तपस्वी महात्माओं पर जितना भी गर्व करें कम है।

एक बार पंडित जी को यह समाचार मिला कि शाहबाद (जिला अम्बाला) के समीप एक ग्राम में कुछ हिन्दू मुसलमान बनने वाले हैं। उन दिनों आपकी एक टांग में फोड़ा निकला हुआ था जिससे आप बड़े अशान्त थे, किन्तु अपनी पीड़ा का विचार न करते हुए आप वहां पहुंचे और भाइयों को पतित होने से बचा लिया। इसी प्रकार आपने जम्मू पहुंच कर श्री ठाकुर दास को हैदराबाद (सिन्ध) जाकर दीवान सूर्यमल के दो पुत्रों तथा आठ-दस अन्य युवकों को और स्यालकोट पहुंचकर एक सिखरिसाले के सैकड़ों सरदारों को मुसलमान होने से बचाया था। पायल (पटियाला राज्य) में कुछ हिन्दू मुसलमान होने वाले थे। जब आपको यह समाचार मिला तो आप तत्काल वहां जाने के लिये रेलगाड़ी में बैठ गये, किन्तु आपको मार्ग में

विदित हुआ कि गाड़ी पायल स्टेशन पर नहीं रुकेगी। अतः आप चलती गाड़ी से स्टेशन पर कूद पड़े और अपने भाइयों को विधर्मी न बनने दिया।

श्री रामविलास जी शारदा ने भी पंडित जी के सम्बन्ध में लिखा था कि "स्वामी दयानन्द सरस्वती को छोड़कर जिनके विषय में मैं कुछ नहीं जानता क्योंकि मैं उन दिनों कालेज में पढ़ता था और आर्य समाज का सभासद नहीं था, मैंने जितने संन्यासी तथा उपदेशक देखे हैं, ऐसा सच्चा दृढ़ समीक्षक, निर्लोभी, परिश्रमी, जितेन्द्रिय, अपने समय को व्यर्थ न खोने वाला एक भी मनुष्य नहीं देखा। व्याख्यान देने तथा लोगों की शंका समाधान करने के अलावा जो समय उनको मिलता था प्रायः पुस्तक लिखने तथा वैदिक धर्म के विरोधियों को उत्तर देने में लगाया करते थे।

३ मार्च सन् १९३५ ई० के 'प्रकाश' लाहौर में आर्य समाज के लुधियाना के तत्कालीन मंत्री श्री बाबूराम जी गुप्त ने पंडित जी के सम्बन्ध में स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य एक घटना का उल्लेख किया था जो इस प्रकार है। "एक बार अपने बलिदान के तीन-चार मास पूर्व लुधियाना समाज के वार्षिक उत्सव पर श्री पंडित लेखराम भी सम्मिलित हुए थे। व्याख्यान से १५-२० मिनट पूर्व पंडित जी के पेट में ऐसी जोर की पीड़ा हुई कि उनको उत्सवमंडप छोड़ना पड़ा। उस समय कई डाक्टर पंडित लेखराम जी के चिकित्सार्थ पहुंचे। पीड़ा से उन्हें ऐसा व्याकुल देखकर सबको बड़ा आश्चर्य होता था कि ऐसे धीर-वीर पुरुष पीड़ा से इतने व्याकुल क्यों हो रहे हैं। परन्तु उस व्याकुलता का कारण केवल पीड़ा नहीं थी, अपितु उन्हें तो यह विचार व्याकुल किए था कि जो मुसलमान व्याख्यान सुनने के लिए आए हैं वे सब निराश होकर लौट जायेंगे। डाक्टरों ने इन्जेक्शनों द्वारा उन्हें इस योग्य कर दिया कि वे खड़े होकर व्याख्यान दे सकें। उनका यह व्याख्यान आर्य समाज के इतिहास में चिरस्थायी रहेगा। व्याख्यान क्या सिंह गर्जना थी।"

श्री पंडित जी जहां कहीं प्रचारार्थ जाते तो मार्ग में छोटे-छोटे नगरों व ग्रामों में उतर कर व्याख्यान देते जाते थे। उदाहरण के रूप में जब आप १२ जुलाई सन् १८९४ ई० को महात्मा मुंशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द जी) के साथ क्वेटा (बिलोचिस्तान) गये तो वहां आपने १३ व्याख्यान दिए। वहां से वापिस आते समय आपने मार्ग में उतर कर हिरक, दोजान, मच्छ, बोस्तान, खोस्ट, शारग और सिब्बी में दो-दो तीन-तीन व्याख्यान दिये। सिब्बी में आपने दीन मुहम्मद और मुस्तफा को शुद्ध करके वैदिक धर्म में प्रविष्ट कराया।

श्री पंडित जी को बुलाने के लिए यह लिख देना पर्याप्त था कि एक आर्य जातिस्थ पुरुष मुसलमान या ईसाई होने वाला है या किसी मौलवी या पादरी के साथ शास्त्रार्थ की संभावना है। फिर यदि सभा की ओर से आक्षेप होता तो आपका यह उत्तर की शास्त्रार्थ के दिनों का वेतन काट लो, सभा के अधिकारियों को चुप कराने का अचूक साधन था।

सहनशीलता की पराकाष्ठा

६ मार्च सन् १८९७ ई० को जब श्री पंडित जी मुलतान आर्य समाज के उत्सव से वापिस आकर लाहौर पहुंचे तो एक नीच, पतित एवं अंधविश्वासी व्यक्ति ने (जो शुद्धि के बहाने आपके पास आया था और पहिले भी कई बार आपके घर रोटी खाता हुआ देखा गया) छल कपट से आपके निवास स्थान पर आपके पेट में छुरा घोंप दिया जिसके कारण आपकी अतड़ियां बाहर निकल आईं। आपने बांये हाथ से अंतड़ियों को सम्भाला और दायें हाथ से हत्यारे को पकड़ लिया और उसके हाथ से छुरा छीन लिया। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवी जी ने इस भय से कि घातक पुनः आक्रमण न करे आपको रसोई की ओर खींच लिया। तब आपकी वृद्धा माता जी ने दोनों हाथों से घातक को पकड़ लिया, किन्तु उस पिशांच ने साथ पड़ा बेलना उठाकर उन्हें पीटा जिसके कारण वे अचेत होकर गिर पड़ीं और हत्यारा बचकर निकल गया।

श्री पंडित जी को अस्पताल ले जाया गया। छुरा लगने के पौने दो घंटे के पश्चात डा० पैरी साहब आये और निरन्तर दो घंटों तक पंडित जी की कटी हुए आंतों को सीते रहे। डा० पैरी आश्चर्य चकित थे कि दो घंटों तक जिसके अन्दर से रक्त खुला बहता रहा हो वह कैसे जीवित रह सकता है। डेढ़ बजे रात्रि तक श्री पंडित जी सचेत रहे और वेद मंत्र उच्चारण करते रहे। उस समय आपकी वृद्धा माता, युवती पत्नी तथा अन्य आर्य सज्जन फूट-फूट कर रो रहे थे किन्तु मृत्यु शैय्या पर पड़े हुए आपने यह नहीं कहा कि मेरे पीछे मेरी माता व धर्मपत्नी को दुःखी न होने देना। यदि कोई अन्तिम आदेश दिया तो यही और केवल यही कि "आर्य समाज के लेखन का कार्य बन्द नहीं होना चाहिए।"

परमपिता प्रभु हम सबको श्री पंडित जी के पद चिह्नों पर चलने और उनके अन्तिम आदेश का पालन करने की शक्ति प्रदान करें जिससे कि हमारा प्यारा समाज पूर्ववत् दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करता हुआ दृष्टिगोचर हो। ❑

पं० लेखराम बलिदान शताब्दी के संदर्भ में

पं० भोजदत्त शर्मा तथा उनका आर्य मुसाफिर विद्यालय

❑ डा० भवानीलाल भारतीय

पं० लेखराम आर्य मुसाफिर का बलिदान एक आततायी के हाथ से ६ जून १८९७ को लाहौर में हुआ था। उनकी यादगार में यों तो अनेक कार्य किये गये परन्तु पं० भोजदत्त शर्मा द्वारा आगरा में स्थापित आर्य मुसाफिर उपदेशक विद्यालय उस अमर हुतात्मा का अविस्मरणीय स्मारक था। आर्य समाज की नई पीढ़ी न तो पं० भोजदत्त को ही जानती है और न उसने आर्य मुसाफिर विद्यालय का ही कभी नाम सुना। अतः पं० लेखराम की बलिदान शताब्दी के अवसर पर आर्य जनता को यह बताना आवश्यक है कि पं० भोजदत्त कौन थे और उन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार के लिये क्या कुछ किया?

पं० भोजदत्त का जन्म मुजफ्फरनगर के एक ग्राम थाना भवन में एक प्रतिष्ठित गौड़ ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उन्होंने सिंचाई विभाग से सेवा कार्य किया और जब पं० लेखराम का बलिदान हुआ उस समय वे अविभाजित पंजाब के मिन्टगुमरी जिले में कार्यरत थे। आर्य मुसाफिर (पं० लेखराम) के बलिदान के बाद पं० भोजदत्त ने अपनी सोच के अनुसार इस्लाम की तर्क विरुद्ध मान्यताओं के खंडन में अधिक समय लगाना आरम्भ किया। यद्यपि वे आर्य समाज के कार्य में पहले से ही संलग्न थे। उनके इस खंडन से रूष्ट लोगों ने सिंचाई विभाग के अंग्रेज अफसर से पंडित जी की शिकायत की। पं० भोजदत्त के काम से अधिकारी लोग बहुत सन्तुष्ट थे, किन्तु मुसलमानों की शिकायत को भी वाजिब समझा गया। इसलिये अधिकारी ने पहले तो उन्हें समझाया कि वे खंडन के कार्य को छोड़ दें अथवा उन्हें अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ सकता है। पं० भोजदत्त ने अधिकारी के इस कथन की उपेक्षा की कि वे इस्तीफा हरगिज न दें और दूसरे ही दिन उन्होंने सरकारी सेवा से त्याग पत्र दे दिया।

अब वे आगरा आ गये और मुसाफिर प्रेस की स्थापना कर वहां से मुसाफिर नामक पत्र निकालना आरम्भ किया। उन्होंने विधर्मियों की शुद्धि के लिये भारत शुद्धि सभा का गठन किया और पंजाब के प्रसिद्ध नेता पं० रामभजदत्त चौधरी को इसका प्रधान बनाया। इस शुद्धि सभा के द्वारा लगभग ३६ हजार अन्य मतावलम्बियों को वैदिक धर्म में प्रविष्ट कराया गया। पं० भोजदत्त ने कुछ ऐसे विधर्मियों की भी शुद्धि की जो आगे चल कर आर्य समाज के प्रचारक बने। इनमें से निम्न का उल्लेख आवश्यक है।

मौलाना गुलाम हैदर— ये महानुभाव जन्म से ईरानी मुसलमान थे तथा अरबी के विद्वान थे। वे पं० भोजदत्त के पास आये और उनसे कहा कि कुरान पर जो आपत्तियां उन्हें हैं, उन्हें बताएं। वे उनका उत्तर देंगे। इस पर पं० भोजदत्त ने कुरान शरीफ विषयक अपने मन्तव्य उन्हें बताये। विचारों का यह आदान-प्रदान लगभग दो मास तक चलता रहा। अन्त में जो हुआ वह रोमांचक तथा मर्मस्पर्शी था। गुलाम हैदर ने अपने वस्त्रों के भीतर छिपाया एक छुरा निकाल कर पं० भोजदत्त की पत्नी के चरणों में रख दिया और कहा "मैं तो यह छुरा लेकर पंडित जी के कत्ल के लिये आया था परन्तु मैं तो खुद ही कत्ल हो गया। पंडित जी की कुरान विषयक समीक्षा को सुन कर इस्लाम से मेरा विश्वास हट गया है। मैं तो अब उनका खादिम (सेवक) बन गया हूं।" मौलाना शुद्ध होकर पं० सत्यदेव के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे काशी में रहकर संस्कृत का अध्ययन करते रहे। उन्होंने इस्लाम विषयक कुछ ग्रंथ भी लिखे हैं। (द्रष्टव्य— आर्य लेखक कोष पृ० ३०६) मौलाना साहब के वैदिक धर्म में प्रवेश होने का स्वागत करते हुए स्व० पं० देवप्रकाश ने निम्न पंक्तियां लिखी जो आर्य मुसाफिर पत्र में छपी थीं—

तुझे वैदिक धर्म में ए सज्जन आना मुबारिक हो।
सच्चाई का ये जलवा दिखाना मुबारिक हो।
अविद्या की घटाओं और खिंजा के तुन्द झोकों से।
निकल कर गुलशने वहदत में आना मुबारिक हो।

मौलवी मोहम्मद अली कुरैशी— ये महानुभाव पैगम्बर मोहम्मद के खानदान कुरैशी से ताल्लुक रखते थे। अरबी के अच्छे विद्वान थे। पं० भोजदत्त के सम्पर्क में आकर वैदिक धर्मी बन गये और अपना नाम पं० शान्ति स्वरूप रख लिया। आर्य समाज के प्रचार के लिये सर्वत्र जाते थे। कांग्रेस के आन्दोलनों में भी भाग लिया तथा कांग्रेस के टिकट पर उत्तर प्रदेश विधान

सभा के लिये चुने गये। पं० शान्तिस्वरूप अत्यन्त सरल व साधु स्वभाव के व्यक्ति थे। मैंने वर्षों पूर्व आर्य समाज सरदारपुरा जोधपुर के उत्सव पर इन्हें देखा था तथा उनके भाषण भी सुने थे।

मियां अकबर अली— ये सज्जन मूलतः ईरानी थे जिनका परिवार बीकानेर आकर बस गया था। वे रियासत की पुलिस में इन्सपैक्टर बन गये। सत्यार्थप्रकाश का १४वां समुल्लास पढ़कर उन्होंने वैदिक धर्म अपनाने का निश्चय किया और पं० भोजदत्त ने उन्हें यज्ञोपवीत तथा गायत्री मन्त्र प्रदान किया। अब वे वैदिक धर्म में दीक्षित होकर बीकानेर आये और अपनी माता, जो केवल फारसी ही बोल पाती थी, के पांव छूकर कहा— वालदा नमस्ते। ईरानी खातून ने जब अपने पुत्र का यह नया रंग-ढंग देखा तो वह बोली— अकबर तो काफिर गुश्ती (अकबर तू काफिर हो गया) अकबर अली जो अब उत्तम सिंह बन गये थे बोले—वाल्दा काफिर न गुश्ता बल्कि अज कुफ्र बराम्दम (मां, मैं काफिर नहीं हुआ अपितु कुफ्र (अधर्म) से बाहर आ गया हूं।) मां ने जब उनका यज्ञोपवीत देखा तो बोली— जुन्नार मीदारी काफिर गश्ती (यह जनेऊ का धागा ही तेरे काफिर होने का सबूत है।) उत्तमसिंह ने जैसे तैसे माता का समाधान किया। नौकरी से इस्तीफा दिया और आगरा आ गये। पं० भोजदत्त ने उन्हें आर्य मुसाफिर पत्र का मैनेजर बना दिया। अब वे एक अच्छे उपदेशक बन गये।

अकबर अली ने वैदिक धर्म तो स्वीकार कर लिया किन्तु उनमें ईरानियों (प्राचीन आर्य) का उष्ण रक्त यथापूर्व प्रवाहित हो रहा था। आगरा में एक बार सनातन धर्म की सभा में पं० अखिलानन्द ऋषि दयानन्द के विरुद्ध अनाप-शनाप अपशब्दों की वृष्टि कर रहा था। आर्य मुसाफिर विद्यालय के छात्र ठाकुर उत्तम सिंह के साथ इस व्याख्यान को सुनने इस अभिप्राय से आये थे कि यदि पं० अखिलानन्द ने कुछ उल्टा-सीधा कहा तो वे तुरन्त प्रतिकार करेंगे। वे मंच के निकट जाकर बैठ गये और ज्यों ही उन्होंने अखिलानन्द को मर्यादा से बाहर जाते देखा, उसके मुंह पर तड़ाक से जोर का थप्पड़ मार दिया। आर्य समाज और स्वामी दयानन्द को गाली देने में अपनी विद्वता मानने वाले अखिलानन्द का मुंह पूर्व से उत्तर की ओर हो गया और वह चुपचाप मंच छोड़कर चला गया। डॉ० भोजदत्त के सुपुत्र डॉ० लक्ष्मीदत्त जी की शिकायत पर आगरा के अंग्रेज जिलाधीश ने पं० अखिलानन्द को इस नगर में व्याख्यान न देने तथा चौबीस घंटे के भीतर आगरा छोड़कर चले जाने का आदेश दिया।

पं० भोजदत्त द्वारा स्थापित आर्य मुसाफिर विद्यालय में वैदिक धर्म के प्रचार के लिये उपदेशकों को प्रशिक्षित किया जाता था। पं० बिहारी लाल शास्त्री यहां कुछ समय तक अध्यापक रहे तथा छात्रों को आर्य सिद्धान्तों की शिक्षा देते थे। पं० भोजदत्त जी के दो पुत्र डॉ० लक्ष्मीदत्त तथा पं० तारादत्त भी विद्यालय के संचालन में पूरी रुचि लेते थे। इनके विषय में भी कुछ जानकारी दे देना आवश्यक है।

पं० तारादत्त—इनकी शिक्षा बी. ए., एल. एल. बी. तक हुई। पेशे से ये वकील थे। ये खोजपूर्ण व्याख्यान देते तथा आर्य समाजों के उत्सवों में आमंत्रित किये जाते थे। साधु प्रकृति के सरल व्यक्ति थे।

डा० लक्ष्मीदत्त— पं० भोजदत्त के बड़े पुत्र डॉ० लक्ष्मीदत्त पेशे से चिकित्सक थे। प्रारम्भ में आगरा के सरकारी अस्पताल में कार्य किया। बाद में नौकरी से इस्तीफा देकर प्राइवेट चिकित्सा की। उर्दू के अच्छे लेखक, कवि तथा पत्रकार थे। वर्षों तक उर्दू पत्र आर्य मुसाफिर का सम्पादन किया। डा० लक्ष्मीदत्त ने अनेक उर्दू पुस्तकें लिखीं जिनमें इस्लाम की एक तसवीर प्रमुख है। उच्चकोटि के शास्त्रार्थकर्ता भी थे। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के एक वार्षिकोत्सव पर उनका शास्त्रार्थ ईसाई पादरी फ्रेंक जानसन से हुआ जो प्रसिद्ध मराठी पं० नीलकण्ठ शास्त्री, ईसाई मत को ग्रहण करने वाला संस्कृतिज्ञ पंडित का पौत्र था। जब वह डा० लक्ष्मीदत्त के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता तो आंखों में आंसू भर कर बोल उठा— डॉक्टर जी, यदि मेरे दादा के समय में आप जैसा कोई योग्य व्यक्ति उनकी धर्म विषयक शंकाओं का समुचित समाधान कर देता तो वे ईसाई हरगिज नहीं बनते। डा० लक्ष्मीदत्त ने पादरी फ्रेंक जानसन को छाती से लगा लिया और कहा— हम अब भी आपको अपने प्राचीन धर्म में लेने के लिये तैयार है॥ इस पर पादरी बोला—अब यह सम्भव नहीं है। प्रथम तो चर्च से जो मुझे वेतन मिलता है उसका चौथाई भाग देना भी आर्य समाज के लिये सम्भव नहीं है, दूसरी बात यह है कि ब्राह्मण दादा का पौत्र होने के कारण ईसाई समाज में मुझे जो सम्मान प्राप्त है वह हिन्दू लोग मुझे हरगिज नहीं दे पायेंगे। यह बात यहीं समाप्त हो गई।

डॉ० लक्ष्मीदत्त ने अनेक गजलें भी लिखीं जिन्हें स्व० सुखलाल आर्य मुसाफिर प्रायः गाया करते थे। आगे चलकर वे

(शेष पृष्ठ २८ पर)

स्वतंत्रता संग्राम के शिल्पी : श्यामजी कृष्ण वर्मा

❑ अजय कुमार गुप्ता

देश की स्वतंत्रता के लिए अदम्य साहस और वीरता के प्रतीक श्यामजी कृष्ण वर्मा ने विदेश जाकर इंग्लैंड में इंडिया हाऊस की स्थापना कर अपनी गतिविधियां बढ़ाईं और लोगों को स्वराज्य के लिए प्रेरणा देनां शुरू किया। वे क्रांतिकारी युवकों के प्रेरणा स्तम्भ रहे। १८५७ की क्रांति के बाद लम्बे अन्तराल के बाद श्यामजी कृष्ण वर्मा ने ही सर्वप्रथम क्रांतिकारी प्रयास किया इसलिये उन्हें स्वतंत्रता संग्राम के शिल्पी के रूप में जाना जाता है।

जन्म एवं शिक्षा— स्वतंत्रता के शिल्पी कहे जाने वाले श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म गुजरात प्रान्त के कच्छ के पिछड़े राज्य माण्डवी कस्बे में ४ अक्टूबर सन् १८५७ को हुआ। पिता कृष्ण जी वर्मा भाणशाली जाति के वैश्य थे। प्रारम्भिक शिक्षा के लिए श्यामजी को माण्डवी की प्राथमिक शाला में प्रविष्ट कराया गया। शिक्षा के प्रारम्भ में असाधारण प्रतिभा सम्पन्न होने के कारण उन्हें भुजनगर के अंग्रेजी विद्यालय में भेजा गया। श्यामजी अपनी नानी के साथ बम्बई आये। वहां के एक सेठ मथुरादास जी सहायता से विल्सन हाईस्कूल में प्रवेश लिया।

स्वामी दयानन्द से भेंट—श्यामजी की भेंट स्वामी दयानन्द सरस्वती से हुई जब स्वामी जी आर्य समाज की स्थापना (१० अप्रैल १८७५) के लिये बम्बई आये थे। श्यामजी के हृदय पर स्वामी दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व एवं वैदिक विचारधारा का अमिट प्रभाव पड़ा। उन्हें वे अपना गुरु मानते थे। श्यामजी को संस्कृत की शिक्षा स्वामी दयानन्द से ही प्राप्त हुई और उन्होंने अष्टाध्यायी कण्ठस्थ कर संस्कृत भाषा व्याकरण एवं साहित्य में असाधारण अधिकार कर लिया। उनकी योग्यता की चर्चे विद्वानों में होने लगी थी।

स्वामी दयानन्द ने अपने वेदभाष्य के मुद्रण एवं प्रकाशन का कार्यभार श्यामजी को सौंपा। इसका दायित्व उन्होंने पूरी तरह से सम्भाला इसलिये स्वामी दयानन्द योग्य एवं विद्वान शिष्य के प्रति स्नेह का भाव रखते थे।

अध्ययन के लिये विदेश यात्रा :— बम्बई में प्रोफेसर मोनियर विलयम्स ने श्यामजी से भेंट की और उन्हें आक्सफोर्ड आकर अध्ययन करने को कहा। उन्होंने यह विचार स्वामी दयानन्द तक पहुंचा दिया। इसके उत्तर में स्वामी दयानन्द ने आशीर्वाद भेजते हुए पत्र में लिखा कि हमने सुना है कि आपका इरादा संस्कृत पढ़ने के लिए इंग्लैंड जाने का है, सो यह विचार बहुत अच्छा है। आक्सफोर्ड पहुंचकर प्रो० मोनियर विलियम्स के सहायक के रूप में नियुक्त किये गये साथ ही इलाइन कालेज में प्रवेश लेकर अपना अध्ययन आगे जारी रखा और बैरिस्टरी की परीक्षा पास कर ली।

भारत के लिये आदर्श विचारधारा :— पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा को स्वामी दयानन्द ने देश में राजनैतिक कार्य करने हेतु श्याम जी को विदेश जाने के लिये प्रेरित किया, श्यामजी ने इंग्लैंड जाकर वहां पढ़ने योग्य भारतीयों को एकत्र करके इंडियन होमरूल सोसायटी की स्थापना की। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य रखा गया "भारत को स्वतंत्रता दिलाना।" इसके लिये भारतीयों में प्रचार-प्रसार करके राष्ट्रीय एकता को फैलाना और इस संस्था के अध्यक्ष श्यामजी ही चुने गये।

श्यामजी विदेश में रहकर भारतीयों को अधिक से अधिक आने हेतु हर्बर्ट स्पेंजर, स्वामी दयानन्द, शिवाजी आदि के नाम पर छात्रवृत्तियों का प्रबन्ध करते रहे और छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाले छात्रों पर यह विशेष एवं आवश्यक शर्त रखा कि विद्यार्थी अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् ब्रिटिश सरकार की कोई नौकरी या सेवा स्वीकार नहीं करेगा और न ही इस सरकार के अन्तर्गत रहकर कोई लाभ का पद प्राप्त करेगा।

इस विचारधारा से श्यामजी अपने देशवासियों के मन में देश के प्रति अभिमान एवं गौरव के भाव जगाना चाहते थे एवं प्रतिभाशाली छात्र अंग्रेज सरकार की गुलामी में अपना जीवन व्यर्थ न गवाएं ऐसा आदर्श प्रयास उन्होंने किया।

इण्डिया हाऊस की स्थापना— श्यामजी ने लन्दन में भारतीय विद्यार्थियों की आवास समस्या को दूर करने के लिए इंडिया हाऊस नामक छात्रावास खोलने की घोषणा की। इंडिया हाऊस का उद्घाटन करते हुए सोशल डेमोक्रेटिक फेडरेशन के मिस्टर हिण्डमैन ने कहा कि इंग्लैंड के प्रति निष्ठा प्रदर्शित करना भारत के प्रति गद्दारी करना है और उन्होंने कहा कि

यहां उपस्थित लोग चाहें भारत के विभिन्न भागों में रहने वाले तथा विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं के अनुयायी हैं, किन्तु भारत की पूर्ण स्वाधीनता ही प्रत्येक का लक्ष्य है।

इंडिया हाऊस के सम्बन्ध में उन्होंने यह घोषणा की कि यहां उन छात्रों के निवास की व्यवस्था है जो छात्र वृत्तियां पाकर यहां आते हैं एवं यहां के छात्र मदिरापान नहीं करेंगे और यह भारत के किसी भी भाग के विद्यार्थियों के लिए समान रूप से खुला रहेगा।

स्वतंत्रता संग्राम के शिल्पी :—श्याम जी ने लंदन में रहते हुए देश स्वतंत्रता की गतिविधियां बढ़ाई और उनके प्रमुख सहयोगियों में वीर सावरकर, लाला हरदयाल, सरदार सिंह राना, भाई बाल मुकुन्द, मदन लाल ढींगरा, दादाभाई नौरोजी, मैडम भीका जी कामा, लाला लाजपतराय आदि रहे और श्यामजी इन सभी के प्रेरणा स्रोत रहे। मदन लाल ढींगरा ने कर्जन वायली की सरेआम गोली मारकर हत्या कर दी और उन्हें फांसी की सजा हुई इससे श्याम जी जैसे क्रांतिकारी का लंदन प्रवास कठिन हो गया। वहां से वे पेरिस आये और वहां अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया। यहां भी रहना कठिन होने पर वे स्वीटजरलैंड पहुंचे। यहां से "बम बनाने की विधि" नामक पुस्तक लिखकर सेनापति बापट द्वारा भारतीय क्रांतिकारियों तक पहुंचाई एवं अन्य सहयोगियों द्वारा भारत के क्रांतिकारियों के लिए हथियार उपलब्ध करवाये। श्यामजी कृष्ण वर्मा ने कहा था "भारत को स्वतंत्र कराने के लिए यदि बल प्रयोग करने की भी आवश्यकता हो तो ऐसा करने में संकोच नहीं करना चाहिए।"

ऐसे महान देशभक्त क्रांतिवीर को बहुत कम लोग जानते हैं कि एक भारतीय वीर ने अपने देश की स्वतंत्रता के लिए विदेश में रह कर ३३ वर्षों तक संघर्ष किया और स्वीटजरलैंड में ही ३१ मार्च, १९३० को चिरनिद्रा में लीन हो गये।

पुस्तकाध्यक्ष आर्य समाज बिलासपुर

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। हिन्दी का प्रचार-प्रसार करना हम सभी का दायित्व है। अतः आप अपने सभी लेखन कार्य पत्र तथा निमन्त्रण पत्र पर अपने हस्ताक्षर आदि देवनागरी लिपि में ही लिखने का निर्णय करें।

आया है यह पर्व महान

❑ राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति

आया है संकल्पों का यह
पर्व सुपावन वसुन्धरा पर।
इसने ही नव ज्योति बिखेरी
था ज्योतित सा पूर्ण धरा पर।
ऋषिवर दयानन्द सा हममें
जागे त्याग तथा बलिदान।
आया है यह पर्व महान॥

इसने ही ऋषि दयानन्द को,
जनगण मंगल हेतु जगाया।
ऋषिवर के अन्तर मानस में,
सत्य शोध हित भाव उगाया।
इसी बोध के पुण्य पर्व से
आओ हम भी लें अनुदान।
आया है यह पर्व महान॥

'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' हित
आओ हम सत्कर्म करें।
शौर्य शक्ति से साहस से हम
मानवता श्रृंगार करें।
कभी न लें हम प्रतिफल में
कुछ कर्त्तव्यों का ही प्रतिदान।
आया है यह पर्व महान॥

आओ! लें संकल्प सभी हम
जग यह आर्य बनाएंगे।
ऋषिवर दयानन्द के स्वप्नों
को साकर कराएंगे।
महिमण्डल पर फिर से गूंजे
अपौरुषेय वेदों का गान।
आया है यह पर्व महान॥

२३ मार्च जिनका बलिदान दिवस है

वीरांगणी : सरदार भगत सिंह

❑ दिव्या आर्य

आश्विन शुक्ला १३, संवत् १९६४ अर्थात् १९०६। लायलपुर में ख्याति प्राप्त राष्ट्रभक्त आर्य परिवार में एक बालक ने जन्म लिया। इसी दिन कार्यवश नेपाल गए पिता घर लौटे थे तो इस नवजात शिशु के चाचा स्वर्ण सिंह भी कारागार में यम यातनाएं झेलकर वापस आए थे और दूसरे चाचा अजीत सिंह के मांडले (म्यांमार) के कारागार से मुक्त होने का समाचार भी उसके परिवार को प्राप्त हुआ था। परिवार के लिए एक साथ अनेक आल्हाददायक समाचार। ऐसे दिन और वार में जन्मे बालक की दादी ने प्यार से नाम दिया था भागों वाला या भगतां। यही शिशु था भगत सिंह।

पिता ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे। नाम था सरदार किशन सिंह। एक दिन उनके घर पर दयानन्द एंग्लो वैदिक (डी० ए० वी०) कालेज के प्राध्यापक जयचंद विद्यालंकार आए। नन्हें 'भगतां' को उन्होंने सस्नेह अपने समीप बुलाया। नाम आदि पूछने के बाद प्रश्न किया बड़े होकर तुम क्या करोगे? बालक का उत्तर था खेती और वह भी बन्दूकों की। उत्तर सुनकर जयचंद जी दंग रह गए। जाते समय सरदार किशन सिंह से बोले "यह बालक एक दिन आपका नाम रोशन करेगा।" दिन बीतते गए। जब भगत सिंह बड़े हुए तो पिता ने बंगा के प्राइमरी स्कूल में भर्ती करा दिया। वहां प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने पर भगत सिंह को लाहौर के डी० ए० वी० स्कूल में प्रवेश दिलाया गया और वहीं से वह मैट्रिक परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। भगत सिंह का परिवार कट्टर आर्य समाजी था। उनका यज्ञोपवीत संस्कार भी कराया गया था। परिवार के वातावरण ने बाल्यकाल में ही भगत सिंह के मन में कुछ ठोस कर गुजरने का भाव भी जगाया था। उन्होंने कालेज में प्रवेश लिया तो वहां उनका परिचय सुखदेव, भगवती चरण तथा यशपाल आदि से हुआ जो सभी राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए क्रांति पथ के पथिक बने। इनमें सुखदेव सबसे अधिक उग्र विचारधारा के थे। भगत सिंह की उनके साथ घनिष्ठता हो गई। देवता स्वरूप परमानन्द सरीखे महान क्रांतिकारी जिस कॉलेज में शिक्षक हों, उनके संपर्क में आने वाला कोई स्वाभिमानी युवक क्रांति की दीक्षा लेने से बच भी तो नहीं सकता था। उन्हीं दिनों सारे भारत में असहयोग आन्दोलन छिड़ा तो भगत सिंह लाला लाजपतराय के प्रयास से प्रारम्भ हुए उस नेशनल कालेज में भर्ती हुए थे। उन्होंने एफ. ए. की परीक्षा पास की तो परिवार वालों ने उनका विवाह करने की तैयारी शुरू कर दी। किन्तु अपने जीवन को राष्ट्र कार्य के लिए समर्पित कर देने का संकल्प ग्रहण कर चुके भगत सिंह विवाह करने के इच्छुक नहीं थे, अतः घर से भाग निकले।

वह दिल्ली पहुंचे और वहां 'अर्जुन' में पत्रकार के रूप में कार्य करने लगे। कुछ दिन वहां रहकर उन्होंने कानपुर की राह ली, जहां उन्होंने श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' के संपादकीय विभाग में काम किया। भगत सिंह ने तभी अपना छद्म नाम बलवंत रख लिया। उन दिनों उत्तर प्रदेश में क्रांतिकारियों का एक संगठन सक्रिय था, जिसकी शाखाएं कई प्रमुख नगरों में भी थीं। कानपुर में भी श्री विद्यार्थी के सहयोग से श्री योगेश चटर्जी ने उसकी शाखा स्थापित की थी। भगत सिंह के विचारों से प्रभावित विद्यार्थी जी ने उनकी भेंट योगेश चटर्जी से करा दी और वह भी क्रांतिकारी दल के सदस्य बन गए। किन्तु तभी भगत सिंह को अपने पिता के गम्भीर रूप से अस्वस्थ होने की सूचना तार से मिली तो वह लाहौर चले गए। वहां कुछ दिन रहने के पश्चात वह अमृतसर पहुंचे जहां उन्होंने "अकाली" नामक पत्र संपादन जसवंत सिंह नाम से किया और फिर 'कीर्ति' नामक एक पत्र में भी उन्होंने संपादक की भूमिका का निर्वहन किया। उन्हीं दिनों बंगाल में एक अत्याचारी जिलाधीश चार्ल्स रेगर्ट के धोखे में एक १६ वर्षीय बंगाली किशोर गोपीनाथ साहा ने एक अन्य अंग्रेजी अफसर मिस्टर डे को गोली मार दी थी। साहा को इस हत्या के अपराध में मौत की सजा दी गयी थी। गोपी मोहन को दी गयी इस सजा के

विरोध में भगत सिंह ने एक सभा का आयोजन कर उसमें ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध उत्तेजक भाषण किया। परिणामतः वे पुलिस की निगाह में शूल से खटकने लगे। दूसरी ओर क्रांति पथ के पथिक भगत सिंह नौजवान भारत सभा का गठन कर युवकों को संगठित करने में दत्तचित्त हो गए। तभी उन्हें लाहौर में अपने पुराने साथी सुखदेव द्वारा युवकों को क्रांतिकारी संगठन बनाने की जानकारी मिली। भगत सिंह लाहौर पहुंचे और सुखदेव के संगठन से जुड़ गए। उन्हीं दिनों सन् १९२६ में उनकी भेंट चन्द्रशेखर आजाद से हुई। एक गुप्त बैठक में तुरन्त क्रांतिकारी गतिविधियां छेड़ देने का निश्चय हुआ।

जयगोपाल नामक युवक ने स्कूल पुस्तकालय से विस्फोटक पदार्थ बनाने की विधि नामक पुस्तक लेकर प्रयोगशाला से पारा, दो थर्मामीटर और बैटरियां भी पार कर सुखदेव को सौंप दी और फिर शुरू हुआ 'एक्शन'। अक्टूबर १९२६। दशहरा मैदान में लोगों के बीच हुआ एक बम का विस्फोट। विस्फोट के आरोप में नौजवान भारत सभा के कई सदस्य बंदी बनाए गए, जिनमें भगत सिंह भी थे। अभियोग चला। किन्तु निर्दोष प्रमाणित होने पर भगत सिंह बरी हो गए। उत्तर प्रदेश में गोरखपुर जिले के बुड़हलगंज नामक स्थान पर डाकघर में एक कर्मचारी थे कैलाशपति। क्रांतिकारी संगठन के सदस्य थे वह भी। उन्होंने डाकघर से ३२९० रुपए उड़ाए और २६ जून, १९२८ को वह राशि दल के कार्य हेतु सुखदेव को सौंपकर फरार हो गए। इसी बीच दल का केन्द्रीय कार्यालय स्थापित करने का भी निश्चय हुआ। ८-९ सितम्बर, १९२८ को संगठन की गुप्त समिति की दिल्ली में आयोजित बैठक में उसकी कार्यकारिणी का चुनाव हुआ। भगत सिंह को दल की शाखा के गठन और प्रत्येक क्रांतिकारी से संपर्क करने का भार सौंपा गया। दल का नया नामकरण हुआ 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी'। क्रांतिकारी गतिविधियों को और अधिक तीव्र करने में स्वातन्त्र्य वीर सावरकर की अमर कृति "१८५७ का स्वाधीनता संग्राम" का पठन-पाठन भी दल के सदस्यों के लिए अनिवार्य किया गया।

चन्द्रशेखर आजाद के सुझाव पर बंगाल के कुछ उत्साही युवकों को लेकर आगरा, सहारनपुर व लाहौर में बम बनाने के कारखाने भी स्थापित किए गए। ३० अक्टूबर, १९२८ को साइमन कमीशन लाहौर आया तो उसके विरोध में स्वामी दयानन्द के प्रखर अनुयायी लाला लाजपत राय के नेतृत्व में एक जलूस निकाला गया। पुलिस ने भयानक दमन का सहारा लिया और पुलिस अधीक्षक स्काट ने लाला जी को भी बुरी तरह घायल कर दिया। उस समय आई चोटें ही अन्ततः १७ नवम्बर को लाला लाजपतराय के निधन का कारण बनी। तभी भगत सिंह ने प्रतिज्ञा ग्रहण की कि स्काट को मौत के घाट उतार कर प्रतिशोध लिया जाएगा। इस कार्य को संपन्न करने की योजना बन गई। १७ दिसम्बर, १९२८ को राजगुरु और भगत सिंह ने पुलिस अधीक्षक कार्यालय के समक्ष सहायक कमिश्नर सैंडर्स को अपनी गोलियों से छलनी कर दिया। इस गोलीकांड के बाद नगर के चारों ओर पुलिस का पहरा बैठा दिया गया। किन्तु मूंछें और दाढ़ी कटवाकर यूरोपीय छद्मवेश धारण कर भगत सिंह पुलिस की आंखों में धूल झोंककर लाहौर से सकुशल निकल गए। राजगुरु ने भगत सिंह के अर्दली का बाना धारण किया और चन्द्रशेखर ने आजाद तीर्थयात्री पंडे के वेश में पुलिस को धता बतायी।

इसके बाद क्रांतिकारी संगठन की कार्यकारिणी समिति की बैठक में भगत सिंह ने रूस जाकर वहां से शस्त्र भेजने का सुझाव रखा। किन्तु सुखदेव से मतभेद हो जाने के कारण यह योजना क्रियान्वित नहीं हो पाई। बाद में योजना बनी कि भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त असेम्बली में बम फेंके। ८ अप्रैल १९२९। भगत सिंह और दत्त ने यह कार्य सम्पन्न किया। किन्तु वे असम्बली से भागे नहीं। वे चाहते तो बम फेंकने के बाद और कई को मौत के घाट उतार सकते थे, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं करते हुए इंकलाब जिन्दाबाद का नारा लगाया और निर्भीकता सहित पुलिस के समक्ष आत्म समर्पण कर दिया। दिल्ली में असेम्बली बम कांड का अभियोग भगत सिंह और दत्त पर चला। लाहौर बम कांड और सैंडर्स हत्याकांड के अभियोग के लिए उन्हें क्रमशः मियांवाली और लाहौर के कारागारों में ले जाया गया। अंततः अक्टूबर १९३० को भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को मृत्युदंड सुनाया गया तो अन्य को तीन वर्ष से लेकर आजीवन कालेपानी की सजाएं सुना दी गयीं। भगत सिंह आदि की सजा रद्द करने की मांग को लेकर देशभर में हड़ताल और प्रदर्शन हुए। किन्तु अन्ततः २३ मार्च, १९३१ को लाहौर सेन्ट्रल जेल में सुखदेव और राजगुरु के साथ भगत सिंह भी फांसी की रेशमी डोरी चूमकर अमर हो गए।

एक सार्थक जीवन—महात्मा वेदभिक्षुः

❑ सत्यपाल

कहते हैं कि प्रत्येक मानव में कोई न कोई प्रेरक शक्ति होती है, जो उसे अपने जीवन का उद्देश्य पाने के लिए हांकती रहती है। उद्देश्य अनेक हो सकते हैं, लेकिन कहा जाता है कि प्रायः एक ही उद्देश्य मुख्य होता है, शेष उसके रूप होते हैं। अंग्रेजी में आप इसे Urg कह सकते हैं। यदि हमारे जीवन का उद्देश्य 'खाओ पियो और मौज करो' ही है, तो उद्देश्य तो यह भी है, लेकिन यह उद्देश्य इतना क्षुद्र है कि इसकी पूर्ति के लिए किये गये प्रयत्नों में हमारी पूरी योग्यता और सामर्थ्य नहीं झलकती।

स्वर्गीय पंडित भारतेन्द्रनाथ जी अत्यन्त कर्मठ व्यक्ति थे। खाली बैठना तो वे जानते ही न थे। प्रश्न यह है कि उनके जीवन की यह सारी दौड़धूप किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए थी। जब वे गुरुकुल में मेरे साथ पढ़ते थे, तब उन्होंने एक बार गम्भीरता मिश्रित विनोद में कहा था कि "अपने जीवन में मैं कम से कम इतना तो कर ही डालना चाहता हूँ कि जब मैं इस संसार से विदा होऊं तब 'ट्रिब्यून' के प्रथम पृष्ठ पर समाचार छपे कि Bharatendra Nath Shukla dead "(भारतेन्द्रनाथ शुक्ल का निधन)।" कर्मठता बचपन से ही उनके स्वभाव का अंग रही। वे सदा कुछ न कुछ करते रहते थे। भाषण, कविता, लेखन आदि में उनकी रुचि जीवन के प्रारम्भिक काल से ही थी। इन सब क्रियाकलापों को लेकर वे किस दिशा में सोचते थे, इसका अनुमान आप इस बात से लगा सकते हैं कि उन्होंने अपना उपनाम 'विपलव' रखा हुआ था। उन दिनों मण्डी धनौरा (जिला मुरादाबाद) की मासिक पत्रिका शिक्षा सुधा और लाहौर के साप्ताहिक आर्य में उनकी रचनायें प्रकाशित हुआ करती थीं। बचपन से ही उनका झुकाव पत्रकारिता की ओर था। यह उन दिनों की बात है, जब पत्रकारिता देश सेवा का सशक्त माध्यम ही न थी अपितु देशभक्ति और पत्रकारिता पर्यायवाची समझे जाते थे। पंजाब में हिन्दी पत्रकारिता के प्रवर्त्तक पंडित भीमसेन विद्यालंकार से उनका परिचय तभी हुआ था। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए उन्हें प्रेरणा देने वाले एक अन्य महापुरुष थे आचार्य नरदेव शास्त्री, जो भारतेन्द्र जी के पिता पंडित गयाप्रसाद शुक्ल के गुरु थे। पत्रकारिता की इस परम्परा का प्रारम्भ पंडित इन्द्र विद्यावाचस्पति, पंडित रुद्रदत्त शर्मा, पंडित अम्बिका प्रसाद वाजपेयी आदि से होता था। भारतेन्द्र जी ने इसी परम्परा को जारी रखा। उनकी पत्रकारिता को आप मधुसंचय का नाम दे सकते हैं। रीडर्स डाइजेस्ट और नवनीत की तरह जहां से कोई अच्छी चीज मिली उसे अपने पत्र में स्थान दे दिया। लेखन की भी एक हुड़क होती है। सन् १९४५ में जब सिन्ध की मुस्लिम लीगी सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर प्रतिबन्ध लगा दिया तब आर्यसमाज ही नहीं, समस्त हिन्दू जगत् की ओर से इस पग का प्रबल विरोध हुआ। उन दिनों भारतेन्द्र जी गुरुकुल में इंटरमीडियेट परीक्षा की तैयारी कर रहे थे। उन्होंने लाहौर के डेली हेराल्ड के सम्पादक के नाम पत्र लिखा जो प्रकाशित भी हुआ। उस पत्र में सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध का अनौचित्य युक्तिपूर्वक प्रतिपादित किया गया था।

वही सम्पादक अपने पाठकों को एक हजार शब्द दे सकता है जिसने चार हजार शब्दों का अध्ययन किया हो। यह बात भारतेन्द्र जी के बारे में भी कही जा सकती है। मैं स्वयं अधिकाधिक पत्र-पत्रिकायें पढ़ने के लिए प्रयत्नशील रहता हूं। लेकिन भारतेन्द्रजी की रुचि पढ़ने तक ही सीमित न थी। न जाने कहां-कहां की पत्रिकायें खरीदना, फाइल बनाना और यथासमय उनकी कतरनों से अपनी पत्रिका को सजाना-संवारना यह सब उनके लिए व्यसन ही हो गया था। लेखन के बारे में उनका विचार था कि मन में जो भी विचार उठे उन्हें लेखनीबद्ध कर डालना अच्छे लेखन को जन्म देता है। तैयारी तो सदा चलती रहनी चाहिए, न कि लिखने से ठीक पहले। वे बताते थे कि एक बार जब वे "दैनिक आर्यमित्र" के सम्पादक थे तब एक रात लम्बे दौरे के बाद कार्यालय में आकर बैठे ही थे कि फोरमैन ने आकर सम्पादकीय लेख का तकाजा किया। भारतेन्द्रजी का शरीर टूट रहा था, लेकिन सम्पादकीय लेख तो देना ही था। उन्होंने उसी स्थिति में सम्पादकीय लेख लिख दिया। शीर्षक था— नींद आ रही है। उनका कहना था कि उस स्थिति में लिखा गया वह सम्पादकीय लेख सामान्य स्थिति में लिखे जाने वाले अनेक सम्पादकीय लेखों से भी कहीं अधिक अच्छा बन पड़ा। वे पत्रकारिता में जीते थे—उसी में रमे हुए थे।

भारतेन्द्रजी से मेरा प्रथम साक्षात्कार तो अप्रैल सन् १९३४ में हुआ था, लेकिन वह कुछ दिन के लिए ही था। वे अपनी माता विद्यावती जी शारदा के साथ गुरुकुल जेहलम के वार्षिकोत्सव पर आये थे। उसके बाद वे सन् १९४२ की आखिरी तिमाही के प्रारम्भ में गुरुकुल में आये। उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी भूषण परीक्षा के लिए फार्म भरा। मुझे याद है कि वे अपने साथ पत्र-पत्रिकाओं से भरा हुआ ट्रंक लाये थे, जिसमें उन दिनों प्रकाशित होने वाली प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं के पिछले अंक थे। उनकी हिन्दी बहुत अच्छी थी। उस समय उनकी उम्र १४-१५ वर्ष की थी, लेकिन अध्ययन इतना था कि सुमित्रानन्दनपंत की रहस्यवादी कविताओं पर भी वे बातचीत कर सकते थे और करते थे। उनकी माताजी शिक्षिका थीं और पत्र-पत्रिकाओं व पुस्तकों में संचित यह अमूल्य ज्ञान उन्हें मुख्यतः अपनी माताजी से ही मिला। बाद में तो उनका वैचारिक धरातल काफी ऊंचा उठ गया था और वैदिक साहित्य के अतिरिक्त जवाहरलाल नेहरू और हैराल्ड लास्की सदृश आधुनिक लेखकों के साहित्य में भी उनकी गहरी पैठ हो गई थी।

किशोरावस्था में तो वे दिन का अधिकांश समय अध्ययन में ही बिताते थे लेकिन कार्य क्षेत्र में उतरने के बाद उन्होंने प्रातः और रात्रि के ही तीन चार घंटे अध्ययन के लिए रख छोड़े थे। सन् १९७४ की बात है। एक दिन भारत प्रकाशन (जो हिन्दी-अंग्रेजी की पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित करता है) के तत्कालीन जनरल मैनेजर श्री वीरेन्द्र सिंह पमार जनज्ञान के कार्यालय में आये तो भारतेन्द्र जी ने उनसे कहा कि हम मानते हैं कि वेद सब सत्य विद्याओं का ग्रंथ है। लेकिन अब तक प्रकाशित भाष्य पढ़कर तो यह विश्वास नहीं होता। स्वामी दयानन्द सरस्वती तो अपना कर्त्तव्य पूरा कर गये लेकिन उनके बाद के विद्वानों ने उतना अनुसंधान नहीं किया जितना वेदों का सही भाष्य करने के लिए आवश्यक था। मैं यह काम करना चाहता हूं लेकिन कैसे करूं? प्रशासन में फंसा हुआ व्यक्ति अध्ययन के लिए पर्याप्त समय नहीं निकाल पाता।"

भारतेन्द्रजी ने लम्बी आयु नहीं पाई वे केवल ५५-५६ वर्ष जिये। लेकिन इस अल्प काल में भी वे इतना कुछ कर गये कि एक उर्दू शायर का यह शेर उन पर सटीक लगता है—

किसी की चार दिन की जिन्दगी सौ काम आती है,
किसी की सौ बरस की जिन्दगी से कुछ नहीं बनता।

उम्रभर न वे स्वयं चैन से बैठे और न उन्होंने अपने सहयोगियों को चैन से बैठने दिया। बोलचाल की भाषा में कहना हो तो कहा जायेगा कि उन्हें अतिव्यस्तता की बीमारी थी। सामान्य व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों में ही काम कर पाता है। इस दृष्टि से भारतेन्द्रजी असामान्य थे। जवाहरलाल नेहरू कहा करते थे कि "I am not interested in excuses I am interested in the work done." (बहानों में मेरी दिलचस्पी नहीं, मेरी दिलचस्पी तो इस बात में है कि काम पूरा हो जाये।) भारतेन्द्रजी का भी यही दृष्टिकोण था। यदि किसी सहयोगी ने उनसे कहा कि इतने कम समय में मैं यह काम पूरा न कर पाऊंगा तो उनका उत्तर होता था "अब तक तो यह काम पूरा हो जाना चाहिए था।" जब एक लेखक ने उनसे कहा कि यह पुस्तक लिखने के लिए मुझे अध्ययन करना पड़ेगा। इसके लिए समय चाहिए।" तब भारतेन्द्रजी ने (जो तब तक महात्मा वेदभिक्षुः हो चुके थे), मुस्कराते हुए उनसे कहा कि 'आपकी उम्र ८६ वर्ष है क्या इतना समय अध्ययन के लिए कम था?" सम्भवतः हर काम जल्दी कर डालने का यह स्वभाव भी भारतेन्द्रजी में इसीलिए आया कि वे चिरकाल तक पत्रकारिता में रहे और पत्रकारिता में dead line (समय की अन्तिम सीमा) के अन्दर रहकर ही काम पूरा करना होता है।

भारतेन्द्रजी केवल पांच घंटे सोते थे— रात के बारह बजे से प्रातः पांच बजे तक। कभी समय मिल जाय तो एकाध घंटा दिन में आराम कर लेते थे। उनका शेष सारा समय कामकाज में बीतता था। मन-मस्तिष्क योजनाओं से भरे रहते थे।

उनका झुकाव मौलिक लेखन की ओर था। पंडित किशोरीदास वाजपेयी भारतेन्द्रजी के गुरुतुल्य थे। वाजपेयी जी बहुत विद्वान थे लेकिन उनका सारा जीवन मुख्यतः हिन्दी भाषा के लेखन में होने वाली गलतियां ठीक करने में ही बीत गया। इस मामले में भारतेन्द्रजी वाजपेयी जी से भिन्न थे। यद्यपि वे वाजपेयी जी का बहुत आदर करते थे। भारतेन्द्रजी का कहना था कि भाषा में प्रवाह होना चाहिए। उसे व्याकरण के नियमों में बहुत अधिक जकड़ा नहीं जाना चाहिए। प्रयोजन तो अपनी बात समझाने से है। मुझसे वे अक्सर कहा करते थे कि सम्पादन के नाम पर सारी उम्र मक्खियां ही न मारते रहिये, कुछ मौलिक भी लिखिये—सृजनात्मक अनुवाद में भी वे मूल भाषा की छाया से बचने का अनुरोध किया करते थे।

महात्मा सुमेर सिंहजी, स्वामी योगेश्वरानन्दजी, आचार्य रामदेवजी, (स्वामी सत्यानन्दजी), स्वामी ब्रह्ममुनिजी, मौलाना

हसरत मोहानी, डॉक्टर सूर्यकान्तजी शास्त्री आदि अनेक मनीषी भारतेन्द्रजी की माताजी को अपनी बहन मानते थे और भारतेन्द्रजी इन्हें मामाजी कहते थे। इस नाते इन सज्जनों के सान्निध्य का अवसर और लाभ भारतेन्द्रजी को मिला। इन सब का जीवन के अन्त तक भारतेन्द्रजी के परिवार से घनिष्ठ सम्बन्ध बना रहा। महापुरुषों के संस्कार भी भारतेन्द्रजी को विरासत में मिले। बचपन में वे क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में भी आये। सरदार भगत सिंह उनके बचपन में सहारनपुर जिले के ग्राम टोपरी में कुछ मास माताजी के घर में ही रुके थे।

गुरुकुल से निकल कर उन्होंने आर्यवीर संघ का गठन किया। इसी नाते वे बरेली के डाक्टर श्यामस्वरूप सत्यव्रत द्वारा संचालित पत्रिका 'संघ' के सम्पादक बने। उन्हीं दिनों वे श्री ओमप्रकाश त्यागी के निकट सम्पर्क में आये, जो तब सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान संचालक थे। गुरुकुल में रहते समय उनकी रुचि धार्मिक कार्यों की अपेक्षा राजनीतिक कार्यों में अधिक थी। एक बार उन्होंने मांग की कि गुरुकुल में ओम् के झंडे के साथ तिरंगा झंडा भी लहराया जाये। जो इस प्रस्ताव के विरोधी थे उन्होंने कहा कि गुरुकुल धार्मिक संस्था है। यहां किसी राजनीतिक दल का झंडा कैसे लहराया जा सकता है। खूब चख-चख हुई। अनशन की भी नौबत आई। अन्त में यह मांग मान ली गई। भारतेन्द्रजी की दलील थी कि जब गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर और गुरुकुल बदायूं में तिरंगा झंडा लहराया जा सकता है तो अपने गुरुकुल (जेहलम) में क्यों नहीं लहर सकता? गुरुकुल के उत्सव पर छात्रों के भी भाषण हुआ करते थे। भारतेन्द्रजी के भाषण का विषय एक ही होता था—देश की स्वतंत्रता। वे सोहनलाल द्विवेदी की एक कविता प्रायः सुनाया करते थे, जिसके एक अंश में भारतमाता को सम्बोधित कर कहा गया है—

प्रण और प्राण की बाजी का लगा हुआ है फेरा,
उतरेंगी तेरी कड़ियां या उतरेगा सिर मेरा।

राजनीति में धर्म और धर्म में राजनीति का दखल हो या न हो यह विवाद बहुत पुराना है। इस सम्बन्ध में भारतेन्द्रजी के कुछ सुलझे हुए विचार थे। वे (अपने गुरुतुल्य आचार्य नरदेव शास्त्री की तरह) धर्ममय राजनीति और राजनीतिमय धर्म के तो विरुद्ध न थे, लेकिन इन दोनों में एक विभाजक रेखा बनाये रखना चाहते थे। सन् १९५८ में जब स्वर्गीय प्रकाशवीर शास्त्री गुड़गावां से लोकसभा के उपचुनाव में खड़े हुए तब भारतेन्द्रजी ने उनके समर्थन के लिए आर्यसमाज की वेदी और साधनों के इस्तेमाल का प्रबल विरोध किया। भारतेन्द्र जी राजनीतिक कार्यों के लिए अलग मंच के पक्ष में थे। आर्यसमाज को वे मुख्यतः धार्मिक कार्यों के लिए सुरक्षित रखना चाहते थे। इसलिए हिन्दू हितों की रक्षा के लिए उन्होंने 'हिन्दू रक्षा समिति' की स्थापना की। उन्हें यह निश्चय हो चुका था कि राजनीति में भाग लिये बिना अपनी आवाज को प्रभावशाली नहीं बनाया जा सकता। सन् १९७० में और उसके बाद जब कुछ नवदीक्षित युवा संन्यासियों ने आर्य समाज की वेदी से मार्क्सवाद का प्रचार किया तब भारतेन्द्रजी ने इसका विरोध किया। वैदिक समाजवादी सिद्धान्तों और मान्यताओं को जनता के समक्ष रखने के लिए उन्होंने इस विषय से सम्बन्धित एक पुस्तिका स्वयं लिखी और पंडित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा लिखित एक अन्य पुस्तिका प्रकाशित की।

भारतेन्द्रजी जिस काम को अपने हाथ में लेते थे, उसे बड़े पैमाने पर अच्छे ढंग से करते थे। एक बार अमरीका के रिसर्च स्कालर प्रो० जे० टी० एफ० जोर्डन्स भारतेन्द्रजी के निवास स्थान पर आये। उन्होंने पंडित गंगा प्रसाद उपाध्याय द्वारा अनूदित अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश भारतेन्द्रजी को दिखाते हुए कि "यह आपका धर्म ग्रंथ है मैं इसका सम्मान करता हूं। लेकिन इसकी छपाई, कागज आदि इतने घटिया हैं कि जी चाहता है इसे उठाकर फैंक दूं।" भारतेन्द्रजी को यह बात इतनी चुभी कि उन्हीं के शब्दों में "मुझे रात भर नींद न आई।" उन्होंने स्वर्गीय दुर्गाप्रसादजी द्वारा अनूदित अंग्रजी सत्यार्थप्रकाश जनज्ञान प्रकाशन की ओर से प्रकाशित करवाया और प्रारम्भ में उसे केवल पांच रूपये में उपलब्ध करवाया।

चारों वेदों का भाष्य उन्होंने केवल ३५ रुपये में देने की व्यवस्था की। लेकिन वे इतना करके भी सन्तुष्ट नहीं हुए। उनका कहना था कि मेरा वश चले तो मैं पांच रुपये में चारों वेदों का भाष्य सुलभ कर दूं।

ऊपर हमने प्रश्न उठाया था कि उनके जीवन का उद्देश्य क्या था? उनके सारे जीवन पर एक दृष्टि डालने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे कुछ कर गुजरने इस संसार में आये थे।

आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी कहा करते थे कि- "यह शरीर काम करने के लिए मिला है, इसलिए नहीं मिला कि उम्र भर इसी को पालते-पोसते रहें।" यही जीवन दर्शन भारतेन्द्रजी का भी था। पूर्ण वेद भाष्य छपते समय लक्ष्य पूर्ति होने तक उन्होंने दो वर्ष तक अन्न, नमक और मीठे का त्याग किये रखा। स्वर्गीय जवाहर लाल नेहरू ने जो

देश को नारा दिया था "आराम हराम है" उस नारे पर और कोई चला हो या न चला हो, लेकिन भारतेन्द्रजी अवश्य चले।

जीवन के जो चार लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष बताये गये हैं, उनमें से दो लक्ष्यों अर्थ और काम के लिए तो प्रायः सभी लोग प्रयत्न करते हैं, लेकिन भारतेन्द्र जी ने तो सारा जीवन धर्म प्रचार में लगाया। धन, परिवार और अपने शरीर तक की चिन्ता छोड़कर बीमारी की हालत में भी काम करने से उनका स्वास्थ्य अधिकाधिक खराब होता गया—यहां तक कि अन्ततः वे दो वर्ष के व्रत अन्न, नमक, मीठा छोड़ने से सिरासिस आफ लिवर जैसे दुस्साध्य रोग के शिकार हो गये। इतने पर भी उनका कहना था कि "जब मरना ही है तो कुछ करके मरूंगा।" वे अन्त तक काम में लगे रहे। उनका अन्तिम लेख "हिन्दू बेटे कब तक पिटते रहेंगे?" ५ दिसम्बर १९८३ को लिखा गया था। अस्पताल ले जाने के कुछ ही घंटे पूर्व।

हमने इस रचना का शीर्षक दिया है—"एक सार्थक जीवन।" अच्छे काम करना ही उनके जीवन की सार्थकता थी।" उस कर्मयोगी को सच्ची श्रद्धांजलि यही हो सकती है कि हम भी जीवन पर्यन्त अच्छे काम करते रहें। उपनिषद् के ऋषियों से लेकर आचार्य विनोवा भावे तक का संदेश यही तो है **चरैवेति चरैवेति।**

(पृष्ठ २१ का शेष)

कांग्रेस द्वारा चलाये गये आजादी की तहरीक में शामिल हो गये। देशभक्ति और साम्प्रदायिक सद्भाव को लेकर भी उन्होंने उच्च कोटि की नज्में लिखीं।

आर्य मुसाफिर विद्यालय से उच्चकोटि के विद्वान उपदेशक निकले। उनमें से कुछ का परिचय देना आवश्यक है। (१) साधु महेश प्रसाद— हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में अरबी, फारसी के प्रोफेसर, प्रो० महेश प्रसाद मूलतः इलाहाबाद के निवासी थे। उन्होंने ईरान की यात्रा की थी तथा उस पर एक पुस्तक लिखी। ऋषि दयानन्द के जीवन के तथ्यों के अनुसंधान में उनकी बहुत रुचि थी। इस विषय से सम्बन्धित उनकी अनेक पुस्तकें हैं। इन्हीं की लड़की कल्याणी देवी को जब काशी विश्वविद्यालय की वेद तथा कर्मकाण्ड की कक्षा में प्रवेश नहीं दिया गया था तब आर्य समाज ने विश्वविद्यालय के संस्थापक पं० मदनमोहन मालवीय से कह कर उन्हें प्रवेश तो दिलवाया ही, नारी के वेदाध्ययन के अधिकार का भी दृढ़ता से प्रतिपादन किया था। महापंडित राहुल सांकृत्यायन जो स्वयं आर्य मुसाफिर विद्यालय में पढ़ चुके थे, साधु महेशप्रसाद जी का बहुत सम्मान करते थे। (२) केदारनाथ पाण्डेय (राहुल सांकृत्यायन) हिन्दी के विख्यात लेखक राहुलजी भी जब उन पर आर्य समाज का रंग चढ़ा था। कुछ समय तक इस विद्यालय के छात्र रहे। उन्होंने आत्मकथा में उन दिनों का हाल लिखा है। मौलवी महेशप्रसाद के प्रति उनके हृदय में अत्यन्त सम्मान था जिसे उन्होंने एक लेख में पृथकशः लिखा था। (३) ठाकुर अमर सिंह (अमर स्वामी) आर्य समाज के जानेमाने उपदेशक तथा शास्त्रार्थ महारथी अमर स्वामी जी भी इस विद्यालय के छात्र रहे। बाल्यकाल में ही विवाह हो जाने तथा विवाहितों को विद्यालय में प्रवेश न देने का नियम होने पर भी उन्हें विशेष प्रतिभाशाली जान कर पं० भोजदत्त ने इस विद्यालय में प्रविष्ट कर लिया। (४) कुं० सुखलाल आर्य मुसाफिर— ये स० अमरसिंह के चचेरे भाई थे। मुसाफिर विद्यालय के छात्र भी रहे तथा उसके संचालन में भी योगदान किया। अन्य छात्र जो उपदेशक बने (६) पं० अयोध्या प्रसाद, पटना, (७) पं० परमानन्द (८) पं० मुरारीलाल, काशी (९) पं० भगवती प्रसाद (१०) पं० मुराली शास्त्री, हिसार में कार्यरत रहे। (११) पं० रामगोपाल, आजमगढ़ इस विद्यालय के दो छात्र राजस्थान में वैदिक धर्म प्रचार करते रहे। पं० रामसहाय शर्मा (ओम्भक्त) आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के तत्त्वावधान में यावज्जीवन आर्य समाज का कार्य किया। (२) पं० रामचन्द्र आर्य मुसाफिर अजमेर के डी० ए० वी० हाई स्कूल में वर्षों तक अध्यापक रहे। पर्याप्त आयु प्राप्त कर दिवंगत हुए।

पं० भोजदत्त का निधन १९१६ में आर्य समाज शिमला में हो गया। उनके निधन के पश्चात इस विद्यालय को उनके पुत्र डॉ० लक्ष्मीदत्त ने चलाया। जब १९२० में महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन चलाया तो लाखों आर्य समाजी इस स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। विद्यालय के संचालन में भरपूर योग देने वो कुं० सुखलाल तथा डा० लक्ष्मीदत्त भी कांग्रेस के आन्दोलन में जेल गये। कुंवर साहब के गानमय व्याख्यानों को महात्मा गांधी ने सुना था तथा वे उनकी वक्तृत्व शैली के प्रशंसक थे। इस प्रकार जब विद्यालय के संचालक राजनीति को समर्पित हो गये तो उनका ध्यान इस संस्था की ओर से हट गया और पं० धर्मवीर लेखराम का यह महान् स्मारक भी इतिहास की धरोहर बन गया। यह लेख मैंने हालौण्ड देश के एमस्टर्डम नगर में लिखा है।

८/४२३, नन्दन वन जोधपुर

बहुमुखी प्रतिभा के धनी : महात्मा वेदभिक्षुः

❑ चमन लाल क्षत्रिय

"यदि आप नहीं चाहते कि निधन के तुरन्त बाद लोग आपको भुला दें तो ऐसा कुछ लिख दो कि जो पठनीय हो अथवा ऐसा कुछ कर दो कि जो कुछ लिखने का आधार जुटा सके।" फ्रैंकलिन के ये शब्द जिस महान इंसान के क्रियाकलाप और जीवन में खरे उतरे उन्हीं महात्मा वेदभिक्षुः (पं० भारतेन्द्रनाथ) की स्मृति का उनके जन्म दिवस पर मानस पटल पर उभरना सहज भाव ही लाता है।

महात्मा वेदभिक्षुः ने एक सफल पत्रकार के रूप में जो कुछ लिखा, उसके मूल में एक लक्ष्य ही उनकी प्रेरणा का सूत्र बना था। वह था महर्षि दयानन्द की मानव कल्याणकारिणी विचारधारा से जनगण को अवगत कराने का। आर्य समाज के एक ध्येयनिष्ठ सेनानी के रूप में वे एक उपदेशक और वैदिक धर्म प्रचारक के रूप में समाज के समक्ष उभरे। साथ ही विद्यमान परिस्थितियों में अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा निनादित बिछड़े-पिछड़े बन्धुओं को पुनः अपने समाज का अविभाज्य अंग बनाने के लिए गतिमान किए गए शुद्धि के अभियान को सशक्त करने के प्रति वे अनुरक्त हुए थे तो उनके संगठन के महामंत्र को भी उन्होंने अपने अन्तःकरण में धारण किया। देवता स्वरूप भाई परमानन्द और स्वातन्त्र्य वीर सावरकर तथा डा० केशव राव बलिराम हेडगेवार का हिन्दुत्व दर्शन उनके लिए प्रेरक बना। अपनी संकल्प शक्ति का प्रदर्शन उन्होंने वैदिक धर्म और हिन्दुत्व के प्रचार-प्रसार करने हेतु अनेक बाधाओं, अवरोधों को सहर्ष अपना कंठहार बनाया।

आर्य समाज, हिन्दू रक्षा समिति, हिन्दू मंच और हिन्दू महासभा के मंचों से वेदभिक्षुः जी के विचारों को सुनने का सुयोग मुझे भी जीवन में कई बार मिला। मैंने उनके द्वारा व्यक्त किए गए विचारों का श्रवण कर निराशा में आशा की किरण का दर्शन पाया था। वस्तुतः उन्होंने आग्नेय पथ स्वेच्छया स्वीकार किया था। उनका विलक्षण सा जीवन उस प्रत्येक राष्ट्रभक्त के लिए सतत प्रेरणा का स्रोत रहेगा, जिसने भारत माता के प्रति अनुरक्ति और भक्ति को अपने मानस मन्दिर में सहेजा है। जो वेद द्वारा प्रतिपादित धर्म और हिन्दुत्व के इस मूलमंत्र को राष्ट्र जीवन के लिए प्राण वायु के रूप में स्वीकार करता है, **'सर्व भवन्तु सुखिनः'** जिसका शाश्वत स्वर है।

प्रथम भेंट में ही कुछ ऐसी अनुभूति हुई थी कि अपने व्यवहार में सामान्य सा प्रतीत होने वाला यह व्यक्ति वास्तव में असाधारण व्यक्तित्व का धनी है, जिसका जीवन दोहरे मानदंडों से सर्वथा मुक्त है और जिसका अंतरंग और बहिरंग सर्वथा एक सा है। स्वदेश की समस्याओं के प्रति जिसके मन में टीस थी, हिन्दू समाज की दुरवस्था जिसके मानस को सालती थी, किन्तु साथ ही उस महामानव के मन में प्रज्वलित थी एक ऐसी अग्नि भी कि जो क्षार-क्षार कर देना चाहती थी उन विसंगतियों को, उन खामियों को जो राष्ट्र के जीवन को घुन बनकर ग्रस रही हैं। जब देश में गोरक्षा आन्दोलन छिड़ा तो उन्होंने एक कर्त्तव्यनिष्ठ पत्रकार के रूप में अपनी पैनी लेखनी का उपयोग उसे धारदार बनाने के लिए तो किया ही, साथ ही उनकी ओजस्वी वाणी ने भी अनेक को इस महान राष्ट्रीय अभियान में योगदान देने हेतु प्रेरित किया। इतना ही नहीं अपितु पंडिता राकेश रानी को उस समय की नन्हीं सी बालिका अपनी पुत्री ऋचा को गोदी में उठाए, कृष्ण मन्दिर (कारागार) की ओर पठाने में भी उन्होंने संकोच नहीं किया था।

महात्मा वेदभिक्षुः के विलक्षण व्यक्तित्व को शब्दों में अंकित करना एक अति कठिन उपक्रम है। 'आत्मा की आवाज' को सुनना उनके जीवन का स्थायी भाव था। 'आत्मा की आवाज' पर ही उन्होंने सुख सम्पदा और सम्मान प्राप्ति के आकर्षणों को ठुकराया था। उसी की पुकार सुन उन्होंने परम पिता परमात्मा की अमर वाणी वेद को हर परिवार में पहुंचाने की बात मन में ठानी थी और वह भी उस अवस्था में जब अभाव ही उनका चिरसंगी था। मात्र ३५ रुपए में तब चारों वेदों का हिन्दी भाष्य उपलब्ध कराकर उन्होंने एक ऐसा अद्भुत चमत्कार कर दिखाया था जो वेद प्रचार इतिहास का स्वर्णिम अध्याय बना रहेगा।

'पोप' की यात्रा के विरोध में, उससे पैदा होने वाले जिन संभावित खतरों का संकेत उन्होंने अपनी लेखनी और वाणी के माध्यम से दिया था, वे आज एक सीमा तक साकार होकर उभर रहे हैं। तथाकथित पिछड़े वर्गों के ईसाइयों के लिए आरक्षण की मांग का उभार उनके द्वारा व्यक्त की गयी आशंकाओं को ही सत्य सिद्ध कर रहा है।

महात्मा वेदभिक्षुः के अनेक कथन आज पूर्व चेतावनियां सिद्ध हो रहे हैं। वेद के प्रचार का उनका अभियान, हिन्दू संगठन हेतु संघर्षरत होने का उनका आह्वान तथा हिन्दू राष्ट्र के विभिन्न अंगों में समरसता की संजीवनी का संचार उनके द्वारा हम सबको दिया गया उत्तराधिकार है। अपनी नश्वर काया का परित्याग कर अपनी यशगाथा को छोड़कर उन्हें विदा हुए अब एक दशक से अधिक की अवधि बीत चुकी है। बहिन राकेशरानी ने उनकी डगर पर निर्भीकता सहित चलते हुए अभावों का अंधड़ झेला है, अभियोगों की तीक्ष्ण बौछारें झेली हैं। हिन्दू महासभा के महान नेता स्वर्गीय बिशनचन्द्र सेठ के शब्दों में उन्होंने स्वातन्त्र्य संघर्ष की महान सेनानी झांसी की रानी जैसा धैर्य और शौर्य दर्शाया है। हम सबका यह कर्त्तव्य है कि हम संस्थान और जनज्ञान को तन-मन-धन से सहयोग प्रदान कर महात्मा वेदभिक्षुः के वेद प्रचार अभियान और हिन्दू संगठन महायज्ञ को सतत प्रज्वलित रखें। उस कर्मठ विभूति के प्रेरक जन्म दिवस पर सभी आर्य (हिन्दू) बन्धुओं से मेरा यही आग्रह है।

संपादक 'वीर सावरकर' मासिक

अमिट छाप

❑ डॉ० सु० व० काले

वैदिक सिद्धान्तों से मेरा निकट परिचय कैसे हुआ? इस प्रश्न के उत्तर में मैं यही कहूंगा कि "पूज्य वेदभिक्षुः जी और मासिक जनज्ञान के कारण।"

मुझे याद है कि सन् १९६९-७० में वेदभिक्षुःजी ने मुझे जनज्ञान का ग्राहक बनाया। तब से अब तक मैं लगातार इसका ग्राहक हूँ। इसके प्रत्येक अंक में इतना ज्ञान रहता है और इसमें प्रकाशित रचनाएं इतनी अच्छी होती हैं कि उन्हें पढ़कर चित्त प्रसन्न हो जाता है। आर्यसमाजी दृष्टिकोण, वैदिक सिद्धान्तों, सामाजिक समस्याओं और राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय स्थिति के सम्बन्ध में इस पत्रिका में जो सामग्री प्रकाशित होती है वह मुझे इतनी अच्छी लगती है कि मैं एक अंक पढ़ लेने के बाद अगले अंक की प्रतीक्षा करने लगता हूँ। कुछ समय बाद वेदभिक्षुःजी से मेरा पत्र व्यवहार प्रारम्भ हुआ। मैंने उनसे जनज्ञान के ग्राहक बनाने की रसीद बुकें मांगीं। उन्होंने मुझ पर विश्वास किया और रसीद बुकें भेज दीं। मैंने मराठवाड़ा में सैकड़ों लोगों को जनज्ञान का ग्राहक बनाया। वेदभिक्षुःजी ने जनज्ञान के माध्यम से अपने सत्साहित्य का प्रचार किया और उसे लागत मूल्य पर जनता तक पहुंचाया। वे "मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूं" नामक एक स्तम्भ लिखा करते थे। इस स्तम्भ में प्रकट किये गये विचार विशेष रूप से प्रेरणादायक और उत्साहवर्धक होते थे। पाठक सोचने लगता था कि "मैं देश और समाज के लिए ही नहीं, विश्व के कल्याण के लिए कुछ करूं।" वे जनज्ञान के ग्राहकों को अनेक पुस्तकें उपहार में दिया करते थे। उनका लक्ष्य सत्साहित्य को जनता तक पहुंचाना था। वह भी कम मूल्य में। वे दयानन्द संस्थान के अन्तर्गत जनज्ञान प्रकाशन को गोरखपुर के गीता प्रेस की तरह सस्ते और अच्छे साहित्य का प्रकाशन गृह बनाना चाहते थे। वेदभिक्षुः जी की कृपा और जनज्ञान के माध्यम से मेरी रुचि वैदिक सिद्धान्तों विशेषतः आध्यात्मिकता में बढ़ने लगी। मेरे मन में प्रश्न उठने लगे— मैं कौन हूं? मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य क्या है? मोक्ष क्या है? सच्ची तपस्या किस बात में है? इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर मुझे जनज्ञान पढ़कर ही मिलते थे। उन्होंने जनज्ञान (हिन्दी और अंग्रेजी) के अनेक विशेषांक इस रूप में निकाले कि किसी अंक में पूरी की पूरी पुस्तक पाठक को मिल जाये। उदाहरणार्थ वैदिक सिद्धान्त, अध्यात्मयोग, अग्निहोत्र (अंग्रेजी), यह धन किसका है? (अंग्रेजी), उपनिषद्, मोपला (उपन्यास) आदि अनेक पुस्तकें विशेषांक के रूप में जनज्ञान के ग्राहकों को दीं। उन्होंने और पंडिता राकेशरानी ने मिलकर यह बहुत बड़ा और ठोस कार्य किया है। यह एक अविस्मरणीय कार्य है।

वेदभिक्षुः जी आजीवन सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार में लगे रहे। उनका कहना था कि आर्यसमाज का मुख्य कार्य वेदों के प्रचार द्वारा जनता की विचारधारा को सही दिशा में मोड़ना है। उन्होंने "वेदों का यथार्थ स्वरूप" सदृश वृहद् ग्रंथ केवल चार रुपये में दिया। उन्हीं से प्रेरणा पाकर मैंने मराठवाड़ा में सत्साहित्य का प्रचार किया। मैंने उन्हें पत्र लिखा कि "हमारी प्रचार करने की इच्छा है। हम व्यापारी तो हैं नहीं कि पूंजी लगाकर काम शुरू करें। आप उधार पुस्तकें भेजते जाइये। हम बिक्री से प्राप्त धन आपको भेजते जायेंगे।" मेरा उनसे प्रत्यक्ष परिचय न था। फिर भी उन्होंने मेरी प्रार्थना मान ली। हजारों रुपये का साहित्य भेज दिया। दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित प्रायः सभी पुस्तकों की सौ-सौ प्रतियां हमें मिले गईं। हमने यह साहित्य आर्यसमाज मन्दिर परली-वैद्यनाथ (तालुका अम्बाजोगाई, जिला बीड़) में रखवा दिया। हमने आर्यसमाज में ही एक वैदिक पुस्तक भंडार खुलवा दिया। (अभी भी वह चल रहा है।) हमने मराठवाड़ा में सात जिलों में घूम-घूमकर सत्साहित्य का प्रचार किया। यह उन्हीं की कृपा थी कि हम किनवर, उदगीर, लातूर, उमर्गा, गुंजोटी, उस्मानाबाद, नलदुर्ग, अम्बाजोगाई, परभण, वसमत, हिंगोली, सेलू, मानवत, जालनरा, औरंगाबाद, शिल्लोड, कन्नड़, गंगापुर, धर्मावाद आदि दूरवर्ती ग्रामों में सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार कर पाये। हमने वहां की पाठशालाओं, कालेजों और वाचनालयों में यह साहित्य पहुंचाया। वे पुस्तकें अब भी वहां के वाचनालयों और पुस्तकालयों में विद्यमान हैं। आज भी जनज्ञान के पिछले अंक पढ़ने को मन करता है। उसमें प्रकाशित रचनाएं ज्ञानवर्धक और जीवनोपयोगी होती हैं। अब तक आर्यसमाज परली-वैद्यनाथ हजारों रुपये का साहित्य बेच चुका है।

उन्हीं की योजना थी कि सत्यार्थप्रकाश कम मूल्य पर दिया जाये। विदेशों में चल रहे पुस्तकालयों को मुफ्त भेंट किया जाये। उन्होंने ही ३५ रुपयें में चारों वेदों का हिन्दी भाष्य जनता को सुलभ करने की योजना बनाई और उसे पूरा करके दिखाया। उनकी अनेक अन्य योजनाएं भी थीं। उन्होंने पोस्टर, कलैंडर, डायरी आदि से भी वैदिक विचारधारा का प्रचार किया। वे कहा करते थे कि भाषणों, सम्मेलनों, नारों, जलूसों आदि की अपेक्षा सत्साहित्य के प्रचार पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए। वे बड़े-बड़े आयोजनों की बजाय स्थानीय प्रचार

पर अधिक जोर देने के पक्षधर थे।

मराठवाड़ा में आगमन

यह मेरा सौभाग्य था कि वे मराठवाड़ा पधारे। यहीं मैंने उनके दर्शन किये। वे प्रचार और "मराठी मासिक जनज्ञान" के प्रकाशन के लिए अनुकूल भूमि तैयार करने के लिए महाराष्ट्र के दौरे पर आये थे। वे परली-वैद्यनाथ आये थे, लेकिन तब मैं यहां न था। वे मुझसे मिलने की खातिर गंगाखेड़ पहुंचे, जहां मैं उस समय नियुक्त था। मुझे उनका स्वभाव बहुत अच्छा लगा। उनका ऊंचा कद, भव्य मुखमंडल, बात करने का ढंग आदि सामान्य व्यक्तियों से अलग था। बातचीत में मुख्यतः प्रचार सम्बन्धी विषय आये। उन्होंने मुझे प्रेरित किया। यहां तक कहा कि "नौकरी छोड़ो और हमारे साथ चलो।" मैंने कहा कि "हमारा काम कौन करेगा?"

हमारी दूसरी मुलाकात परली-वैद्यनाथ में हुई। वे अपनी कार में स्वामी जगदीश्वरानन्दजी और अपनी ज्येष्ठ पुत्री सौ० ज्योत्स्ना के साथ आये थे। उन्होंने हमारे घर दुग्धपान किया और नान्देड़ चले गये। आर्यसमाज की ओर से उनके भाषण का आयोजन किया गया था।

अन्तिम भेंट

उनका और मेरा पत्र-व्यवहार जारी रहा। अन्तिम भेंट अजमेर के महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी समारोह में हुई। अनेक विषयों पर चर्चा हुई। हिन्दू रक्षा समिति की स्थापना को लेकर मेरा उनसे वैचारिक मतभेद था। लेकिन उन्होंने विरोध में लिखे गये मेरे लेख भी जनज्ञान में प्रकाशित किये। उनका हृदय विशाल था। उन्होंने हिन्दुओं को वैदिक धर्म के रास्ते पर लाने के लिए ही हिन्दू रक्षा समिति की स्थापना की। उनका दृष्टिकोण व्यापक था। संकुचित दृष्टि वाले लोग उनका आशय न समझ पाये। हिन्दू रक्षा समिति की स्थापना से सत्साहित्य के प्रचार के साथ हिन्दुओं का संगठन भी उनका उद्देश्य हो गया। वेदभिक्षुजी और पंडिता राकेशरानी जनज्ञान में प्रकाशित अपने लेखों में सदा अराष्ट्रीय प्रवृत्तियों का डटकर विरोध करते रहे। ईसाइयत के प्रचार को रोकने के लिए भी इन दोनों ने मिलकर प्रचुर साहित्य तैयार किया। इसी प्रकार कुरान की अवैज्ञानिक बातों का खंडन करने के लिए दयानन्द संस्थान से अनेक पुस्तक-पुस्तिकाएं प्रकाशित हुई। हिन्दू रक्षा समिति द्वारा हिन्दुओं के जागरण का कार्य पूरे उत्साह से किया गया। वेदभिक्षुजी और राकेशरानी ने ही हिन्दू राज्य का नारा दिया। धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद का विरोध किया। मांग की कि नागरिक अधिकार सबके लिए समान हों। अल्पसंख्यकों का तुष्टीकरण बन्द किया जाये। जातपात को जड़-मूल से उखाड़ फेंका जाये। दयानन्द संस्थान के उद्देश्यों को देखकर हम जान सकते हैं कि वेदभिक्षुजी का ध्येय कितना ऊंचा और दृष्टिकोण कितना व्यापक था। पारिवारिक बन्धनों की उपेक्षा कर देश और धर्म की सेवा में लगे रहना कितना कठिन है, यह समझते हुए भी वे इस कण्टकाकीर्ण पथ पर बढ़े। यहां तक कि उन्होंने धन की कमी की भी चिन्ता न की। धन की कमी के कारण जो बड़े कार्य वे स्वयं न कर सकते थे उन्हें धनवानों द्वारा करवा लेते थे।

उनकी लेखनी में बल था। उनके शब्द हृदय को छूते थे। उन्होंने हजारों व्यक्तियों से अपने लक्ष्य की पूर्ति में सहयोग लिया। जनता ने उन्हें लाखों रुपये दिये, जिससे उनका काम आगे ही आगे बढ़ता गया। इस सबसे उनकी कर्मठता का पता चलता है। वे एक अच्छे पत्रकार, साहित्यकार, तत्त्वज्ञ, धार्मिक और मानवमात्र के शुभचिन्तक थे।

उनकी एक शिक्षा मुझे अभी भी याद है। उन्होंने लिखा था कि "स्वार्थी बनो।" मुझे आश्चर्य हुआ कि अब तक हमने यही उपदेश सुना था कि "स्वार्थी मत बनो", लेकिन ये तो कहते हैं कि "स्वार्थी बनो।" जब मैंने कौतूहल के साथ पूरा लेख पढ़ा तो पता चला कि वह आध्यात्मिक विवेचन था, जिसमें कहा गया था कि केवल देह तक सीमित न रहो। देह के साथ आत्मा का भी ध्यान रखो। स्व से उनका आशय आत्मा से था। उनका विचार था कि संगठन को शक्तिशाली बनाने के लिए लोग उद्देश्य की उपेक्षा कर डालते हैं। उनका कहना था कि उद्देश्य मुख्य है, संगठन गौण है। ऐसे अनेक विचार उन्होंने हमें दिये। जनता का मार्गदर्शन किया। वे युवकों, गृहस्थियों, वृद्धों, राजकीयों, धार्मिकों, वैदिकों, पौराणिकों यहां तक कि जहां तक बन सका, सभी को साथ लेकर चले। उनका मार्ग दर्शन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिए था।

अजमेर में जब उनसे अन्तिम भेंट हुई, तब उन्होंने कहा कि आर्यसमाज को आर्यसमाज ही रहना चाहिए। हम उसके स्वरूप में परिवर्तन नहीं करेंगे, अपितु हिन्दुओं की रक्षा के लिए हिन्दू रक्षा समिति के माध्यम से काम करेंगे। हिन्दुओं को संगठित होकर अपने अधिकारों की रक्षा करनी है। उनका कहना था कि **"शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्रचिन्ता प्रवर्त्तते"** अर्थात् जब हथियारों से राष्ट्र रक्षित हो, तभी शास्त्रों की मीमांसा सम्भव है। वे मनीषी, पुरुषार्थी और दूरदर्शी थे। रोगी होने पर भी उन्होंने काम बन्द न किया। जब वेद भाष्य के प्रकाशन में धन की कमी महसूस हुई, तब आर्थिक सहयोग प्राप्त करने के लिए उन्होंने नमक तथा अन्न और मीठे पदार्थों का परित्याग कर दिया। यह सिलसिला दो वर्ष से अधिक समय तक चला। वे अपनी आवाज को दबाते नहीं थे— निर्भीकतापूर्वक प्रकट करते थे। अभी अनेक वर्षों तक हमें उनकी आवश्यकता थी, लेकिन न जाने क्यों परमात्मा ने उन्हें जल्दी ही हमसे छीन लिया।

परली—वैजनाथ

संकल्प-पुरुष : महात्मा वेदभिक्षुः

❑ रघुवीर वेदालंकार

कैसा था यह व्यक्ति? क्या था उसका जीवन? इसे यदि संक्षेप में कहा जाए तो यह कहा जायेगा कि वेदभिक्षुः जी संकल्प तथा साहस की साक्षात् मूर्ति थे। जो सोचा, उसे करके ही दम लिया। वेद छापने की सोची तो चाहे अन्न खाना ही छोड़ना पड़ा, वेद को छाप कर सर्वत्र प्रचारित करके ही दम लिया। साधनों के नितान्त अभाव में भी 'जनज्ञान' तथा 'दयानन्द संस्थान' की स्थापना करना तथा इनको प्रतिष्ठित रूप में चला सकना वेदभिक्षुः जी के ही साहस का परिणाम था। दिल्ली से १५ किलोमीटर दूर ६ हजार गज में वेद मन्दिर का निर्माण, वेदविद्यालय की योजना तथा निरन्तर वेद एवं वैदिक साहित्य का प्रकाशन होना वेदभिक्षुः जी के संकल्प का ही परिणाम थां इसे ही कहते हैं धुन के धनी। इसी धुन का परिणाम था कि असाध्य व्याधि से ग्रस्त होने पर भी उन्होंने मुसलमानों के राष्ट्र विरोधी एवं हिन्दू धर्म विरोधी षड्यंत्र के खिलाफ एक अभियान छेड़ा हुआ था। डाक्टरों ने बोलने, अधिक कार्य करने तथा यात्राएं करने का सर्वथा निषेध किया हुआ था किन्तु उन्होंने किसी की परवाह नहीं की। निरन्तर यात्राएं करते रहे। भारत-भर के विभिन्न नगरों में हिन्दू रक्षा सम्मेलन करते रहे। उनमें पूरी शक्ति से दहाड़ते रहे। यह सब करने से हिन्दू धर्म के विरोधियों के हौसले तो अवश्य पस्त हुए किन्तु इसकी कीमत वेदभिक्षुः जी को कितनी चुकानी पड़ी? बदले में इनका स्वास्थ्य निरन्तर गिरता गया, गिरता गया। बीच में भी कई बार बीमारी के भयंकर आक्रमण हुए और अन्त में यही दुःखान्त परिणति हुई जिससे कि वेदभिक्षुः जी हमसे सदा-सदा के लिए छिन गए।

उनकी लगन, श्रम, तपस्या तथा संकल्प का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि अन्त समय में मृत्यु शैय्या पर लेटे-लेटे भी उन्हें 'जनज्ञान' में प्रकाशनार्थ लेखों की चिन्ता थी। वेदभिक्षुः जी ने स्वल्प समय में ही जो कार्य किया उसकी तो अपनी गरिमा है ही, किन्तु इसके साथ ही ध्यान देने योग्य है उनका संकल्प। इसी संकल्प के बल पर उन्होंने स्वल्प साधनों के बल पर महान् कार्य किया। दयानन्द संस्थान का प्रकाशन गीता प्रेस गोरखपुर के प्रकाशन की समता करता है। यह वेदभिक्षुः जी की तपस्या का ही परिणाम है।

महात्मा वेदभिक्षुः के संकल्प के साथ उनकी लेखनी एवं वाणी भी उनके द्वारा किए गए विशाल कार्य में कारण रहे हैं। उनकी लेखनी में दम था। उनकी वाणी में ओज था, जो श्रोता के मन को झकझोर देता था। 'जनज्ञान' का सम्पादकीय 'मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूं' हृदय को सीधे जाकर छू लेता था। उनकी लेखनी सम्पादकाचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा की याद को ताजा कर देती थी। आशा है कि 'जनज्ञान' आगे भी वेदभिक्षुः जी की लेखन शक्ति के प्रवाह को मन्द नहीं होने देगा।

इन सब विशेषताओं के साथ-साथ वेदभिक्षुः जी का एक अन्य श्लाघनीय गुण था— थोथे अहंकार से दूर रहना एवं विद्वत्प्रेम। प्रायः देखा गया है कि इतना महत्त्वपूर्ण कार्य करने के साथ-साथ व्यक्ति में दम्भ प्रवेश कर जाता है। वह अपने आपको दूसरों की अपेक्षा अधिक गुणी समझता है। सामान्य व्यक्तियों से मिलना वह अपनी अप्रतिष्ठता समझता है। किन्तु वेदभिक्षुः जी इन बातों से अछूते थे। उनके जीवन में, उनकी वाणी में एक मिठास थी जो सभी को उनके साथ इसी प्रकार चिपका लेती थी जैसे रस भरा पुष्प मधुमक्खियों को।

वेदभिक्षुः जी इस संसार में नहीं रहे। विधि का नियम अटल एवं अपरिवर्तनीय है। उसके अनुसार ही वे चले गये। शेष रह गया उनका कार्य। कार्य भी सामान्य नहीं, विशाल एवं गुरुतर है। कुछ उनकी भावी योजनाएं थीं। यथा राजनीति संगठन में हिन्दू विरोधियों को परास्त करना। एक दैनिक पत्र का प्रकाशन जो 'नवभारत टाइम्स', 'हिन्दुस्तान' के मुकाबले का पत्र होना। इनका शुभारम्भ न हो पाया किन्तु जो योजनाएं चल रही हैं, एक लम्बे समय से चल रहीं हैं, न केवल चल रहीं हैं, अपितु प्रतिष्ठा को भी प्राप्त हैं, उनकी रक्षा एवं वृद्धि दयानन्द संस्थान के उत्तराधिकारियों का तो कर्त्तव्य है ही, साथ ही आर्य जनता का भी कर्त्तव्य है कि वह इनकी ज्योति को मन्द न पड़ने दे और वे कार्य हैं— 'जनज्ञान' द्वारा जन जागरण, वेदमन्दिर द्वारा वेद का प्रचार-प्रसार तथा दयानन्द संस्थान द्वारा दयानन्द का संदेश घर-घर पहुंचाना। आओ, हम भी मिलकर महात्मा वेदभिक्षुः जी के इन कार्यों को करने का संकल्प लें। यही उस संकल्प पुरुष के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❑

महात्मा वेदभिक्षुः का जीवन-प्रेरणा का अक्षत पुंज

❑ विक्रम नारायण सावरकर

स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः जी को मैं वेद तथा वैदिक ग्रंथों के प्रकाशक, निर्भीक पत्रकार, प्रभावी लेखक, ओजस्वी वक्ता के रूप में काफी समय से जानता था। परन्तु १३ मार्च, १९८३ का वह दिन मेरे लिए अविस्मरणीय बन गया, जब दिल्ली में आयोजित हुए सम्मेलन में उनको निकट से समझने का अवसर मिला। मैंने यह अनुभव किया कि वह एक श्रेष्ठ राजनीतिक चिन्तक भी थे और हिन्दुओं को राजनीतिक धरातल पर संगठित करने की आपकी एक विशिष्ट शैली थी। वेदभिक्षुः जी पर हिन्दू राज्य निर्माण की एक धुन सी सवार थी, जो उनके लेखन, उद्‌बोधन में बारंबार प्रकट होती रही।

सम्मेलन के आयोजन में आपका एक विशिष्ट दृष्टिकोण था और सम्मिलित सदस्यों में किसी प्रकार भेदभाव किए बिना प्रत्येक को समान रूप से विचार प्रकट करने का आपने पर्याप्त अवसर दिया था। हिन्दू संगठन विशेष कर हिन्दुओं के राजनीतिक संगठन के संबंध में आपकी सूझबूझ निश्चय ही असाधारण मानी जाएगी इसलिए कि आज जब कतिपय तत्त्व अवसर से लाभ उठाकर नवीन संगठन के निर्माण में सचेष्ट दिखाई देते हैं ऐसी अवस्था में स्वर्गीय वेदभिक्षुः जी ने हिन्दुओं के पृथक राजनीतिक संगठन की बात न करते हुए पूर्व से विद्यमान एकमात्र हिन्दू राजनीतिक संगठन हिन्दू महासभा को ही सबल बनाने का आह्वान किया। व्यक्तिगत बैठक में जब मैंने आपसे संयोजक बनने का आग्रह किया तो आपने कहा कि हिन्दू महासभा अध्यक्ष का संयोजकत्व पर्याप्त है और प्रकट रूप से भी आपने दोहराया कि मैं श्री विक्रम सावरकर जी के विचारों का समर्थन करता हूं।

स्व० वेदभिक्षुः जी की कल्पनानुसार उसका गठन नहीं हो सका परन्तु हिन्दू महासभा ने तब उनकी कामनापूर्ति का कार्य शीघ्र ही आरम्भ कर दिया था। हिन्दू महासभा द्वारा तब स्थापित हिन्दू जागरण मंच के माध्यम से हिन्दू समाज में राजनीतिक जागरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। समान नागरिक संहिता, सम्पूर्ण गोवंश हत्याबंदी और हिन्दू राष्ट्र इन तीन प्रमुख सिद्धान्तों को अपनाने वाले संगठनों को मंच में एकत्रित करने में उस संगठन ने महत्त्वपूर्ण सफलता अर्जित की। इसी के फलस्वरूप कुछ वर्ष पूर्व मुम्बई में गठित हिन्दू महासंघ के शिवसेना, हिन्दू सेना, हिन्दू राष्ट्र सेना, हिन्दुस्थान श्रमिक सेना, शुद्धि संगठन, आर्य प्रतिनिधि सभा, हिन्दू एकता आंदोलन आदि समान विचारों की संस्थाओं के एकत्रित आने में सफलता मिली थी।

इस भांति हिन्दू संगठनों को राजनीतिक धरातल पर एकत्र रखकर हिन्दुओं की प्रबल शक्ति का निर्माण करना और इस प्रकार हिन्दू राष्ट्र का निर्माण करना ही स्वर्गीय वेदभिक्षुः जी को सत्यार्थ में श्रद्धांजलि होगी। यह हिन्दुओं का दायित्व है कि इस राष्ट्रीय महायज्ञ में हम अपना सम्पूर्ण योगदान दें। महात्मा वेदभिक्षुः की स्मृति हमें इस राष्ट्रीय महत् कार्य में निश्चय ही सफल बनाएगी।

—पूर्व अध्यक्ष अ० भा० हिन्दू महासभा मुम्बई

हमारा संकल्प

वेद-धर्म की अमर पताका, धरती पर लहरायेंगे।
मानवता की अमृतवाणी, सब तक हम पहुंचायेंगे॥
दयानन्द के सैनिक हैं हम, आगे बढ़ते जायेंगे।
पाखण्डों के गढ़ दुर्गम सब, चूर-चूर कर आयेंगे॥

युग बदला है, बदल रही है, आज मनुज की तरुणाई।
सत्य कांपता खड़ा द्वार पर, पशुता की है बन आई॥
वीरों ने अंगड़ाई ली है, ध्वजा न झुकने पायेगी।
धर्म-न्याय की विजय पताका, लहर-लहर लहरायेगी॥

यह दयानन्द के दिव्यस्वप्न, साकार बनाने की वेला।
अमर शहीदों की बलि का है, मोल चुकाने की वेला॥
एक ओर है पाप, एक ओर है पुण्य, पुण्य की लाज बचाओ।
बलि जाकर भी "वेद ध्वजा" का गौरव, उठो! गूंजाओ॥

—राकेशरानी

एक लाख की शुद्धि का संकल्प करने वाला विलक्षण पथिक

❑ नरेन्द्र अवस्थी

स्वातन्त्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर ने शुद्धि अभियान को गतिमान करने का आह्वान एक युगान्तरकारी उद्घोष के रूप में गुंजाया था। उनके इस महामंत्र को अपने व्यवहार में उतारने वाले महान कर्मयोगी हैं कुमार दिलीप सिंह जूदेव। वीर सावरकर की जय मात्र गुंजाने वाले तो अनेक हैं किन्तु उनकी कल्पना को कृति में उतारा है उन्होंने इस तथ्य की साक्षी प्रस्तुत की है, उन अनेक समारोहों का आयोजन कर, जिनमें हजारों की संख्या में वे बिछड़े वनवासी पुनः विशाल हिन्दू परिवार में सम्मिलित हुए हैं, जिन्हें विदेशी मिशनरियों ने हिन्दू समाज से पृथक कर दिया था।

वैसे तो हम जीवन में हर पल कोई न कोई संकल्प धारण कर पुनः उस संकल्प को भूल ही जाते हैं। इसका कारण यही है कि हम अपने किए गए संकल्प को दृढ़तापूर्वक धारण की क्षमता नहीं रखते। लेकिन कुमार दिलीप सिंह जुदेव जी ने जो संकल्प लिया उसे पूर्ण निष्ठा से निभा रहे हैं। उसी संकल्प को पूर्ण करने में वह तन-मन-धन से जुटे हैं। संकल्प क्या है— संकल्प है एक लाख की शुद्धि का संकल्प- उन लोगों की शुद्धि का संकल्प जो हिन्दू धर्म समाज को छोड़कर ईसाई धर्म समाज के साथ जुड़ गए थे। उन भाइयों को वापस लाने का संकल्प। उन्होंने हजारों हजार ऐसे भाइयों की शुद्धि का कार्यक्रम पूर्ण कर लिया है। श्री जूदेव ने घोषणा की है कि शीघ्र ही पांच परावर्तन शिविर आयोजित किये जायेंगे जिनमें दस हजार पूर्व धर्मान्तरितों की शुद्धि होगी। शिविर स्थल होंगे राजेन्द्रग्राम (शहडोल, म० प्र०) नैनपुर (मंडला, म० प्र०) कसडाल (रायपुर म० प्र०), बालीसकारा (उड़ीसा), सम्भार (धर्मजयगढ़)। इन शिविरों के आयोजन की दृष्टि से कार्य आरम्भ भी हो चुका है।

इस पुण्य कार्य को सम्पन्न करने का संकल्पधारी हैं जशपुर नरेश के उत्तराधिकारी कुमार दिलीप सिंह जुदेव। श्री जुदेव ने यह श्रेय किसी राजसिंहासन पर आरूढ़ होकर नहीं, किसी राजनैतिक दल के नेता के रूप में अपनी जयजयकार करवाकर नहीं, अपितु वैदिक हिन्दू धर्म व हिन्दू समाज को पुनः सुदृढ़ करने की महत्ता के वशीभूत होकर किया।

श्री जूदेव ने जो राज्यसभा के सदस्य हैं, अपने बिछुड़े धर्म बन्धुओं को गले लगाने को परावर्तन को अपना जीवन व्रत बना लिया है। इस महान राष्ट्र कर्म में वे १९७७ से सतत सचेष्ट हैं और सामूहिक शुद्धि कार्य के तेरह आवर्तन पूर्ण कर सौ, दो सौ, हजार, दो हजार नहीं तो सत्तर हजार से अधिक वनवासी पूर्व धर्मान्तरित ईसाइयों को पुनः अपने मूल हिन्दू धर्मसमाज में लिवा लाकर प्रतिष्ठित कर चुके हैं।

श्री जूदेव एक भाग्यवान सपूत हैं जिन्हें महाराज श्री विजयभूषण सिंह जूदेव जैसा पितृत्व प्राप्त हुआ जिन्होंने रायगढ़ के २१३ कि०मी० दूर जशपुर के अपने राजप्रसाद में ही ११ दिसम्बर १९५२ को कल्याण आश्रम की स्थापना की अनुमति एवं सहयोग प्रदान किया। कु० दिलीप सिंह ने अपने पिता के पदचिह्नों पर सतत चलते रहने का संकल्प लेकर वह कुशलता दिखाई कि एक विराट यज्ञ का आरम्भ कर उसके द्वारा देवऋण, ऋषिऋण ही नहीं तो पितृऋण से मुक्त होने का मार्ग अपना लिया। **श्री जूदेव ने यह व्रत कोई अंधता से या भावुकता मात्र से नहीं लिया था, इसीलिए वह एक अजस्र ऋक्षिकुल्या सा अविरत चल रहा है।** स्वयं उनके ही शब्दों में — अपने पूज्य पिता महाराजा विजय भूषण सिंह जूदेव और कल्याण आश्रम के संस्थापक बालासाहब देशपाण्डे से ही उन्हें गांव-गांव, डगर-डगर घूम कर धर्म की अलख जगाने की प्रेरणा मिली। उन्होंने सदा धर्म और प्रजा वत्सलता का पाठ पढ़ाया। मैं वनवासियों के लिए हर राजसी ठाटबाट को लात मार आया हूं। चारों ओर से अपने राज परिवार का विरोध और तिरस्कार सहा है। पर प्रण ठान लिया है कि वनवासियों को विदेशी पादरियों के कपट जाल से मुक्त करूंगा।

आज के युग में जब कि हम लोग दिन-रात धर्म की आड़ में हर तरह की सुख-सुविधाओं को बटोरने में लगे हैं, हिन्दू समाज में ऐसे सपूत भी हैं जो अपना सब कुछ त्याग कर इस परिवार को सबल बनाने में लगे हैं। अपनी सजग सावधान

राष्ट्रनिष्ठा से आश्वस्त श्री जूदेव कहते हैं— मुझे सिर्फ एक बात का जवाब दीजिए। सम्राट अशोक और चन्द्रगुप्त मौर्य के काल से आज तक के भारत के नक्शे उठा कर बताइए कि जिस हिस्से में भी हिन्दू कमजोर हुआ, अल्पमत में आया, वही हिस्सा भारत से अलग क्यों हुआ? क्यों भारत लगातार घटता ही जा रहा है?

श्री जूदेव द्वारा अपनाया हुआ व्रत सरल नहीं तो कष्ट साध्य अवश्य है। श्री जूदेव सच्चे अर्थों में वीर हैं, उन्होंने एक लाख शुद्धि का व्रत लेकर नब्बे हजार तक पहुंच गए हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि एक लाख का संकल्प पूर्ण होने पर वे नवीन संकल्प घोषित कर दें। परन्तु यह कार्य इतना दुःसाध्य और विशाल है कि लाखों नहीं तो कोटि-कोटि बिछुड़े भाइयों को जोड़ना है-अपनाना है और इस विराट यज्ञ के लिए एक नहीं तो श्री जूदेव सम अनेकों होताओं की आवश्यकता है।

काल न किसी के लिए थमता है, न किसी की प्रतीक्षा करता है। इसीलिए तो विदेशी विधर्मियों ने हम से लाखों छीन लिये जो आज करोड़ों हो गये हैं। आज भी यदि हमने सुध नहीं ली तो विधर्मी जनसंख्या का यह संकट वृक्ष और अधिक विराट रूप धारण करके रहेगा, जिसकी जड़ें इस धरती को पुनः फोड़ेंगी, देश पुनः खंडित होगा।

हमें भी चाहिए कि हम सब हाथ पर हाथ धरे न बैठे रहें और श्री जूदेव के पग चिह्नों पर चलते हुए अपने कर्त्तव्य का भी भली प्रकार वहन करें ताकि हिन्दू राष्ट्र समृद्धिशाली हो।

१, आर्य समाज मार्केट, श्रीनिवासपुरी, नई दिल्ली

बच्चे, दीर्घजीवी विद्वानों के लिए सुनहरी अवसर
भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व
तार्किक समीक्षा के लिए
दो रंग में सुन्दर आकर्षक छपाई
(द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)
स्थूलाकार बड़े साइज
20x30x8 में

सत्यार्थ प्रकाश

मूल्य : लागत से कम रु० 50/- प्रति
प्रत्येक प्रति पर 25 प्रतिशत कमीशन
10 से ज्यादा प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन
एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें।

प्राप्ति स्थान :-

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट,
455, खारी बावली, दिल्ली-110006
दूरभाष : 238360, 233112, 2922612

शिवरात्रि पर हम संकल्प लें

❑ राधेश्याम आर्य

शिवरात्रि की पावन वेला! आर्यों का संकल्प दिवस। शिवरात्रि ने ही बालक मूलशंकर के अन्तःकरण को झकझोरा था और वह भी इतने प्रभावशाली ढंग से कि फिर कभी उसके पग सत्यान्वेषण के पथ से विचलित न हुए। वह बालक सत्य पथ और सच्चे शिव का दर्शन करने हेतु स्वामी दयानन्द सरस्वती बना और महर्षि दयानन्द बनकर संसार का सबसे बड़ा तपस्वी, समाज सुधारक, क्रांति-प्रणेता, राष्ट्रीय चेतना का अग्रदूत, वेदोद्धारक, अछूतोद्धारक, समग्र मानवता का जाग्रत प्रहरी बन गया और सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक उत्क्रान्ति का प्रखर सूत्रपात हुआ। इसी शिवरात्रि के पर्व पर प्रेरणा प्राप्त कर महर्षि दयानन्द विश्वमुखी मानवता के संवाहक बने। फिर क्या था? अखंड ब्रह्मचर्य, शक्ति, प्रचंड निर्भीकता, अनुपमेय व्यक्तित्व, प्रखर विद्वता, अपराजेय समर्पण के बल पर महर्षि दयानन्द ने सम्पूर्ण महिमण्डल की दानवता, अज्ञान, अभाव, अन्याय, पाखंड, अन्धविश्वास, कुरीतियों को अकेले, बिल्कुल अकेले ललकारा और उन्हें परास्त किया। उन्हीं की भीषण गर्जना से भारत की स्वाधीनता का पावन पथ प्रशस्त हुआ। ऋषि द्वारा स्थापित आर्य समाज ने स्वतंत्रता के पूर्व तक स्वामी दयानन्द के आग्नेय विचारों के प्रचार व प्रसार हेतु प्राण-प्रण से अथक प्रयास किया। आर्य समाज के ही प्रभावी संघर्ष के कारण स्वाधीनता संग्राम को अजेय क्रांतिकारियों का संबल मिला और अन्ततः अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा। महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज ने मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतकश्राद्ध, जातिवाद, अछूतवाद, पाखंड, बाल विवाह, अनमेल विवाह, अशिक्षा, कुशिक्षा, गोवध, अन्धविश्वास पर करारा प्रहार किया और विधवा विवाह, वेदों का पठन-पाठन, प्रखर राष्ट्रभक्ति, बलिदान एवं त्याग आदि उदात्त भावनाओं को संबल प्रदान किया। सारी धरती के प्रबुद्धजनों ने अंगड़ाई ली।

परन्तु! आज हमारा आर्य समाज कहां जा रहा है? आर्य समाज के उद्देश्यों के प्रति आर्यों की समर्पण भावना कहां विलुप्त हो गयी है? सत्य तो यह है कि हम तथाकथित आर्यजन महर्षि दयानन्द के स्वप्नों व संदेशों को भूलकर मात्र स्वार्थ साधना, पदलिप्सा तथा कुर्सियों के लोभ में फंसकर रह गये हैं। आज हमने महर्षि दयानन्द स्वामी, श्रद्धानन्द, पं० लेखराम, महाशय राजपाल आदि सभी युग पुरुषों के तप, त्याग व बलिदान को विस्मृत कर दिया है। आज हमारे मन्दिरों में प्रकाश की धारा क्यों नहीं प्रवाहित हो रही है? आज समग्र भारत में अवतारवाद, जातिवाद, पाखण्ड, अन्धविश्वास क्यों दिन दूना रात चौगुना बढ़ता जा रहा है। आज सारा राष्ट्र अनाचार, भ्रष्टाचार, नारी उत्पीड़न, बलात्कार, दहेज, हत्या, दुराचरण की प्रचंण्ड अग्नि में झुलस रहा है। अनैतिकता, चरित्रहीनता, दनुजता बढ़ रही है। इसका मात्र एक ही कारण है कि हम आर्यजन एवं हमारा आर्य समाज सो रहा है। यह कटु सत्य है। आज शिवरात्रि की पावन वेला पर हमको इस बात पर विचार करना होगा कि हमारे आर्य समाज की यह दुर्गति क्यों हो रही है? कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का हमारा नारा कहां लुप्त हो गया है? हम स्वयं आर्य नहीं बन पा रहे हैं? आर्य समाज रूपी अग्नि जिसमें पूर्ण संसार की दानवता, अज्ञान, अन्याय को भस्म कर देने की क्षमता विश्व ने देखी थी, आज क्यों बुझ सी गयी है? निश्चित रूप से हम आर्यों ने, आर्य सामाजिक संस्थाओं ने अपने को समय के धारा के साथ बहने दिया है जबकि हमारे ही कन्धों पर समय की धारा को मोड़ने की जिम्मेदारी थी।

आज शिवरात्रि की पावन जागरण वेला पर आइए हम आर्यजन संकल्प लें कि अपना मार्ग बदलेंगे। हम महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं० लेखराम के मार्ग को अपना मार्ग बनायेंगे और महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार करने के लिये अपना सर्वस्व समर्पित कर देंगे और यदि हम ऐसा न कर पाये, तो हम महर्षि दयानन्द व आर्य समाज का नाम लेकर उन्हें कलंकित नहीं करेंगे।

न्याय का उद्देश्य क्या है?

❑ विवेक भूषण दर्शनाचार्य

हमारे देश में प्राचीन काल से ही बड़े-बड़े ऋषि, महर्षि, तपस्वी, विद्वान् आदि होते रहे हैं, जिन्होंने मानव मात्र के कल्याण के लिये विद्या, धर्म और न्याय का संदेश देकर मनुष्य जाति व अन्य प्राणियों पर भी महान उपकार किया है। उसी श्रृंखला में न्याय के क्षेत्र में एक महान् ऋषि हुए हैं, जिनका नाम था— 'महर्षि गौतम'। इन्होंने वेदादि शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन करके वेदों के आधार पर 'न्याय विद्या' को मानव मात्र के लिये प्रस्तुत किया। इस विद्या को इन्होंने जिस शास्त्र में बांधा, उसका नाम है— 'न्यायदर्शन'। इन्होंने इस न्यायदर्शन में सूत्रों की रचना की। इन सूत्रों पर एक अन्य मनीषी ने संस्कृत भाषा में बड़ा उत्तम भाष्य लिखा। इन भाष्यकार का नाम है— 'महर्षि वात्स्यायन'। इनका भाष्य न्यायदर्शन पर प्राचीन और प्रामाणिक माना जाता है तथा 'वात्स्यायन भाष्य' के नाम से प्रसिद्ध है। 'न्याय' की परिभाषा करते हुए महर्षि वात्स्यायन लिखते हैं— **"प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः"** (न्याय भाष्य, सूत्र १/१/१) अर्थात् प्रमाणों से किसी पदार्थ का परीक्षण करके सत्य की खोज करना 'न्याय' है। परन्तु प्रश्न उपस्थित होता है कि इस न्याय का उद्देश्य क्या है? विचार करने पर इस प्रश्न का उत्तर हमें मिलता है कि— न्याय का उद्देश्य सुख की प्राप्ति करना है। **जो व्यक्ति समाज में श्रेष्ठ कर्म करता है, उसे पुरस्कार; और जो दुष्ट कर्म करता है, उसे दण्ड मिलना ही चाहिये; यही न्याय है।** इससे समाज में सुख-शान्ति और व्यवस्था बनी रहती है। समाज के लोग सेवा, परोपकार, दान आदि श्रेष्ठ कर्मों की ओर बढ़ते हैं। दण्ड के भय से चोरी, डकैती, हत्याओं आदि दुष्ट कर्मों से निवृत्त होते हैं। परिणाम स्वरूप समाज में अपराध कम होते हैं और लोग सुख से रहते हैं। परन्तु समाज में कितना ही सुख हो, तब भी मानव पूर्णतया दुखों से छूट गया हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। महान् न्यायविद् महर्षि गौतम जी का कहना है कि जीवन में अनेक प्रकार के छोटे-बड़े दुखों की प्राप्ति होते रहने के कारण संसार में जन्म लेना ही दुख स्वरूप है (न्याय सूत्र ४/२/५५)। अर्थात् संसार में शरीरधारी कोई भी व्यक्ति पूर्ण सुखी नहीं है, उसके जीवन में कोई न कोई दुःख आता ही रहता है। तो क्या यह जन्म-मरण और विविध दुखों का क्रम अनन्त काल तक चलता ही रहेगा या इससे छूटने का कोई उपाय भी है? इस प्रश्न का उत्तर है कि— यदि मनुष्य जन्म मरण के चक्र से छूटना चाहता है, तो उसे संसार के पदार्थों का ठीक-ठीक ज्ञान करना होगा। यही तत्त्वज्ञान ही मोक्ष का उपाय है और इस तत्त्वज्ञान के माध्यम से मोक्ष प्राप्त कराना ही न्याय का उद्देश्य है। न्याय के इस उद्देश्य को=(मोक्ष प्राप्ति को) महर्षि गौतम जी ने अपने न्यायदर्शन में इन शब्दों में व्यक्त किया है— **प्रमाण प्रमेय संशयप्रयोजन दृष्टान्त सिद्धान्तावयवतर्क निर्णयवाद जल्पवितण्डा हेत्वाभासच्छल जाति निग्रहस्थानानां तत्त्वज्ञानान्निः श्रेयसाधिगमः॥** न्याय सूत्र १/१/१

भारतीय मनीषियों की परम्परा में महान् न्यायविद् दार्शनिक महर्षि गौतम न्याय का उद्देश्य केवल सांसारिक झगड़ों को सुलझाने तक ही सीमित नहीं मानते थे। इसके साथ-साथ वे न्याय का उद्देश्य मोक्ष (आवागमन से छुटकारा) भी मानते थे। परन्तु क्या आज का न्याय इन दोनों उद्देश्यों में से किसी में भी सफल हो पा रहा है?

अर्थात् प्राण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रहस्थान, इन सोलह पदार्थों के तत्त्वज्ञान =(यथार्थज्ञान) से मोक्ष की प्राप्ति होती है। परन्तु संसार में ठीक प्रकार से अपना कर्त्तव्य निभाये बिना मोक्ष की प्राप्ति भी नहीं हो सकती। इसीलिये इस सूत्र में जो सोलह पदार्थ बताये गये हैं, उनको ठीक-ठीक समझ लेने और उसके अनुसार आचरण करने से हमारे दोनों प्रयोजन सिद्ध हो सकते हैं कि हम संसार में भी सुखपूर्वक जी सकें और मोक्ष को भी प्राप्त कर सकें। आइये, इन सोलह पदार्थों को संक्षेप में समझने का प्रयत्न करें।

(१) **प्रमाण**— जिस 'साधन' से किसी पदार्थ का ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त किया जाये, उसे 'प्रमाण' कहते हैं। जैसे— आंख से देखकर जाना कि सामने एक पुस्तक रखी है। यहां 'आंख' ज्ञान प्राप्ति का साधन होने से 'प्रमाण' है।

(२) **प्रमेय**— प्रमाण से जिस 'पदार्थ' का ज्ञान प्राप्त

होता है, उस पदार्थ को 'प्रमेय' कहते हैं। ऊपर के उदाहरण में 'पुस्तक' प्रमेय है।

(३) **संशय**— किसी पदार्थ के सम्बन्ध में निश्चयात्मक ज्ञान न होना 'संशय' कहलाता है। जैसे— ईश्वर है या नहीं। बाजार में वस्तु मिलेगी या नहीं। संशय के कारण व्यक्ति सत्य की खोज के लिये प्रयत्न करता है।

(४) **प्रयोजन**— लक्ष्य या उद्देश्य को 'प्रयोजन' कहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य या प्रयोजन है— 'मैं सदा सुखी रहूं, दुःखी कभी न होऊं।'

(५) **दृष्टान्त**— उदाहरण को 'दृष्टान्त' कहते हैं। किसी बात को स्पष्ट करने के लिये उदाहरण दिया जाता है। जैसे— अमुक गायक की आवाज कोयल की तरह मीठी है। यहां 'कोयल' दृष्टान्त है।

(६) **सिद्धान्त**— 'अमुक वस्तु ऐसी है' इस प्रकार से किसी वस्तु के बारे में कहना 'सिद्धान्त' कहलाता है। जैसे— ईश्वर के बारे में कहना कि 'ईश्वर न्यायकारी है।' यह एक सिद्धान्त हुआ।

(७) **अवयव**— परोक्ष पदार्थों की सिद्धि करने के लिये जो वाक्य समूह प्रस्तुत किया जाता है, उसके पांच भाग होते हैं। इन्हीं पांच भागों को 'अवयव' कहा जाता है। वे पांच अवयव ये हैं— प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन।

(८) **तर्क**— किसी पदार्थ का सामान्य ज्ञान होने पर, किसी कारण को देख कर उस पदार्थ के सत्य स्वरूप के सम्बन्ध में जो ऊहा की जाती है, उसे 'तर्क' कहते हैं। जैसे—आत्मा के सम्बन्ध में ऐसी ऊहा करना कि आत्मा शरीर के साथ ही नष्ट नहीं हो सकता, वह तो नित्य होना चाहिये। क्योंकि आत्मा=(व्यक्ति) के ऐसे बहुत से कर्म देखे जाते हैं, जिनका फल उसे इस जन्म में नहीं मिल पाता। यदि उन कर्मों का फल उसे अगले जन्म में न मिले तो उसके कर्म व्यर्थ हो जाएंगे और यह अन्याय होगा।

(९) **निर्णय**— किसी विषय में दो पक्ष बनाकर, प्रमाण और तर्क से विचार करके अन्त में सत्य का निश्चय करना, 'निर्णय' कहलाता है। जैसे— 'ईश्वर है या नहीं।' इन दोनों पक्षों पर प्रमाण और तर्क से विचार करके अन्त में निश्चय होना कि 'ईश्वर है', यह निर्णय कहलायेगा।

(१०) **वाद**— प्रमाण और तर्क आदि की सहायता से सत्य की खोज करने के लिये जो ईमानदारी से शुद्ध बातचीत की जाती है, उसे 'वाद' कहते हैं।

(११) **जल्प**— उक्त वाद में जब छल, कपट आदि की मिलावट करके दूसरे पक्ष वाले व्यक्ति को जैसे-तैसे हराने का लक्ष्य बनाकर जो अशुद्ध बातचीत की जाती है, उसे 'जल्प' कहते हैं।

(१२) **वितण्डा**— यह भी जल्प के समान ही अशुद्ध बातचीत है। जल्प में जल्पी व्यक्ति अपने पक्ष की स्थापना कर देता है कि 'मैं ऐसा मानता हूं' परन्तु वितण्डा में वितण्डावादी व्यक्ति अपने पक्ष की स्थापना भी नहीं करता और केवल दूसरे पक्ष वाले व्यक्ति का खण्डन ही करता जाता और उसे हराने का प्रयत्न करता है।

विशेष— जल्प और वितण्डा का प्रयोग दुष्ट प्रकृति (स्वभाव) वाले व्यक्ति किया करते हैं। उनकी दुष्टता को रोकने के लिये हमें यह ज्ञान तो होना ही चाहिये, कि दूसरा व्यक्ति किस प्रकार से छल, कपट आदि का प्रयोग करके हमें हानि पहुंचाना चाहता है। इसलिये हानि से बचने के लिये जल्प, वितण्डा आदि का सत्य स्वरूप जानना आवश्यक है। यही बात आगे आने वाले हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रहस्थान के सम्बन्ध में भी समझनी चाहिये। इसीलिये सूत्रकार महर्षि गौतम जी ने इन सबका स्वरूप ठीक-ठीक जानने का निर्देश किया है।

(१३) **हेत्वाभास**— जो वाक्य वास्तव में सत्य कारण तो न हो, परन्तु 'सत्यकारण बताया गया है' ऐसा आभास होता हो, उसे 'हेत्वाभास' कहते हैं। जैसे— यह घोड़ा है, क्योंकि इसके सींग हैं। यह कारण ठीक न होने से हेत्वाभास है।

(१४) **छल**— शब्दों के अनेक अर्थ होते हैं। इस परिस्थिति में वक्ता ने जिस अर्थ में शब्दों का प्रयोग किया था, उसे बदल कर (भिन्न अर्थ की कल्पना करके) वक्ता का खण्डन करना 'छल' कहलाता है। जैसे किसी ने कहा— मैंने सारी मिठाई खाली। उसका तात्पर्य था कि रसोई में जितनी मिठाई रखी थी, वह सारी खा ली। परन्तु छलवादी उसका खण्डन इस प्रकार से करता है— पूरे देश में इतनी मिठाई है कि कोई भी एक व्यक्ति नहीं खा सकता, तुम कैसे कहते हो कि मैंने सारी मिठाई खा ली।

(१५) **जाति**— जब एक व्यक्ति अपना सत्य पक्ष प्रस्तुत कर चुका हो और दूसरा व्यक्ति समझ चुका हो कि मेरे पास

(शेष पृष्ठ ४२ पर)

होलिकोत्सव पर्व और स्वामी श्रद्धानन्द

❑ के० के० शुक्ला

रंगों का त्यौहार है होली। उत्सवधर्मी वैदिक संस्कृति में पर्वों की एक पुनीत परम्परा है। इन पर्वों ने ही राजनीतिक विश्रृंखलता के समय में भी आसिन्धु-सिन्धु पर्यन्त इस आर्य भूमि भारतवर्ष की शाश्वत एकता का स्वर निनादित किया है। होलिकोत्सव के अवसर पर छिटकी रंगों की बहार सारे देश के अन्तर्मन में निहित एकता की बयार का आभास कराती है। इस पर्व पर भारतीय मानस में अन्तर्निहित वह भाव हर्ष और उल्लास के साथ साकार होता है, जिसमें भेद-विभेद की दीवारें महत्त्वहीन हो जाती हैं और सकल हिन्दू बंधु-बंधु का वह भाव साकार होता है, जिसने अनेक आघात-प्रत्याघातों को झेलकर भी इस राष्ट्र को एक्य भावना से सरोवार किया है।

इस पर्व के साथ अनेक पौराणिक आख्यान तो जुड़े ही हैं साथ ही देव दयानन्द द्वारा वेद ज्ञान से संसार को आलोकित करने का दायित्व जिस आर्य समाज को सौंपा है, उसके इतिहास में भी होलिकोत्सव ने एक अध्याय जोड़ा है, जो हम सभी आर्य जन के लिए प्रेरक, अनुकरणीय और अनुगमनीय है। सन् १९०२ में होलिकोत्सव २१ मार्च को आया था। उसी दिन शिक्षा के क्षेत्र में नवीन क्रांति का सूत्रपात करने वाले महान कर्मयोगी श्री मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने हरिद्वार के समीप कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल की स्थापना की थी। गुरुकुल की स्थापना पाश्चात्य रंग में भारतीय समाज को रंगने के लिए प्रयासरत ब्रिटिश सत्ताधीशों के सपनों की होलिका जलाने का ही दयानन्द के दीवाने उस कर्मठ इंसान ने उस दिन अनुष्ठान किया था। महात्मा मुंशीराम, जिनकी वैदिक शिक्षा के प्रति निष्ठा और लगन ने नजीबाबाद (उ० प्रदेश) के एक रईस चौधरी अमन सिंह को इस बात के लिए प्रेरित किया था कि उन्होंने गुरुकुल की स्थापनार्थ अपनी ११० बीघा जमीन तो दी ही साथ ही ग्यारह हजार रुपए की धनराशि भी समर्पित की थी। महात्मा मुंशीराम स्वामी श्रद्धानन्द के रूप में अब चिरस्मरणीय हैं, जो हत्यारे अब्दुल रशीद के मजहबी उन्माद की बलि चढ़े थे। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना जीवन इस राष्ट्र को अमरत्व प्रदान करने के लिए समर्पित किया था। उन्होंने गुरुकुल की स्थापना कर भारत में उसकी अपनी वैदिक शिक्षा पद्धति को पुनर्जीवित करने का सपना संजोया था।

होली का यह पर्व उस महाप्राण के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किए गए अनुष्ठान का स्मरण दिलाता है। होली के अवसर पर धनी-निर्धन के भेदभाव को तिरोहित कर जाति, पंथ के भेदभाव से ऊपर उठकर प्रत्येक संस्कृति अनुरागी, रंगों के इस त्यौहार में सहयोगी बनता है। गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक के रूप में आर्य समाज के इतिहास में नया प्रेरक पृष्ठ जोड़ने वाले महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने ही गुरुकुल के प्रथम मुख्याधिष्ठाता और आचार्य का पद भी संभाला था। यह भी एक अद्‌भुत संयोग ही है कि जिस होली पर्व पर हिन्दू समाज, जाति-प्रजाति से ऊपर उठे एक समाज की छवि उभारता है, उसी के अवसर पर १९०२ में स्थापित हुए गुरुकुल में प्रवेश प्राप्ति के लिए जाति का कोई बंधन नहीं होने का सर्वप्रथम उद्‌बोध महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने किया था। लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी पद्धति की शिक्षा थोपकर भारतीय जन को मानसिक तौर पर सदा के लिए अपना दास बनाने की ठानी थी, किन्तु होली के पावन पर्व पर उसके सपनों की होलिका जलाने के लिए ही स्वामी श्रद्धानन्द आगे आए थे। होलिकोत्सव के पावन पर्व के साथ स्वामी श्रद्धानन्द के उस महान् अनुष्ठान की स्मृति जुड़ी हुई है।

आर्य समाज मार्केट, श्रीनिवासपुरी, नई दिल्ली

शिवरात्रि के पवित्र ऐतिहासिक दिन
हम संकल्प लेते हैं कि—

१. धरती पर वैदिक विचारधारा का साम्राज्य स्थापित करेंगे।
२. मतवाद वर्ग जन्मगत पार्थक्य भावना को समूल समाप्त करेंगे।
३. अज्ञान, अन्याय और अभाव के विरुद्ध युद्ध करते रहेंगे।
४. पाखंड, अन्धविश्वास और सत्य विरुद्ध सभी विचारधाराओं पर प्रबल प्रहार करेंगे।
५. मानव मात्र की एकता, समानता के लिए प्रयत्न करते हुए सभी की शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति के लिए हमारा अभियान जारी रहेगा।

इन संकल्पों के सभी शिवरात्रि पर व्रत धारण करें। यज्ञ वेदी पर बैठकर प्रतिज्ञा करें आगे बढ़ने की।

मूली-गुणों की खान

❑ डॉ० मुकेश कुमार

अपने आसपास के बाजार में आसानी से उपलब्ध होने वाली तथा वैज्ञानिकों की नई तकनीक से मूली के विषय में उपलब्ध कुछ जानकारियों का प्रयोग व्यावहारिक जीवन में लाभप्रद सिद्ध हो सकता है। वैसे यदि घर के आसपास थोड़ी सी जगह हो तो हम इसे उगा भी सकते हैं। मूली का बाहरी रंग रूप बिल्कुल सादा है। यानी श्वेत वर्ण व हरे हरे पत्तों से युक्त मूली देखने में जितनी अच्छी लगती है उससे कई गुणा यह गुणों से भरपूर है। कुछेक जगहों पर लाल रंग की मूली भी देखने को मिल जाती है, लेकिन इसका मूल रंग सफेद ही है। आश्चर्य की बात यह है कि सफेद दिखने वाली मूली मानव को लाली कैसे प्रदान करती है?

यह सच है कि जो लोग नियमित रूप से एक मूली का सेवन करते हैं, उनके रंग में निखार, खुश्की, गर्मी, कील मुहांसे, झाइयां व दाग आदि मिट जाते हैं। लौह लवण नामक तत्त्व से युक्त होने के कारण रक्त को शुद्ध करने में मूली सहायक है, जिससे नाखून व होंठ भी गुलाबी आभा से मंडित हो जाते हैं। साथ ही साथ थकान को दूर कर गहरी नींद लाती है। मूली में विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। यह भी गाजर की भांति नेत्र ज्योति के लिए रामबाण औषधि है। अगर निरंतर सेवन करें तो आंखों पर लगा चश्मा भी उतर सकता है।

कंद फल की श्रेणी में आने वाली मूली सब्जी के रूप में ज्यादा देखी व खाई जाती है। इसके साथ ही इसके कई तरह के व्यंजन भी बनते हैं, जैसे बेसन में डालकर मंगोरी, सलाद, सब्जी, चीप्स आदि। मूली की तासीर ठंडी होती है लेकिन यह खांसी और दमा की अचूक दवा है। मूली का प्रयोग दवा के रूप में मूत्राशय की पथरी निकालने में भी किया जाता है। गुर्दे की बीमारियों और पथरी के लिए मूली बहुत गुणकारी है। यह सारे विषैले पदार्थों को निकाल फेंकती है। जिन लोगों के मूत्र नली में कोई सूजन या अन्य रोग हो जाए, उन्हें मूली ठीक करती है। इसकी जड़ की सब्जी पाचक, गरम और स्वर को ठीक करने वाली होती है। मूली की सब्जी का सेवन करने से ज्वर, गले और रस से बहुत लाभ होता है। २५ मिली लीटर मूली के रस में आधा ग्राम जवाखार मिलाकर दिन में दो तीन बार लेने से गुर्दे और मूत्राशय की पथरी टूटकर बाहर आ जाएगी। मूली के पत्तों की सब्जी हल्की और गर्म आंखों के रोगों में भी लाभ पहुंचाती है। बवासीर के रोग में मूली का सेवन लाभदायक होता है। मूली का सूप बनाकर पीने से हिचकी एवं श्वांस रोग में लाभ होता है। मूली के बीजों को छाछ या मट्ठे के साथ मिलाकर दो तीन बार लेप कर देने से कंदमाला में लाभ होता है। मूली को कुचलकर उसका रस निचोड़कर सरसों का तेल मिलाकर पकाकर छान लें। इस तेल की मालिश करने से वात का दर्द शीघ्र ठीक हो जाता है।

आग से जल जाने पर मूली को पीस कर जले हुए स्थान पर लगाने से जलन शांत होती है व घाव में पानी भी नहीं आता है। मूली का रस निकालकर उसे पानी में मिलाकर सिर धोने से जुएं व लीख समाप्त हो जाती है। मूली के बीजों व पत्तों को पीसकर 'दाद' पर लगाने से 'दाद' ठीक हो जाता है। गला खराब हो जाए तो चार पांच ग्राम मूली के बीजों को पीसकर गरम पानी के साथ लेने से आवाज खुल जाती है। आंतों में घाव हो या पेट में कीड़े हो गए हों तो ऐसी अवस्था में एक मूली का नियमित सेवन लाभप्रद होता है। हाई ब्लडप्रेशर प्रकृति की इस अद्‌भुत देन मूली के सेवन से ठीक हो जाता है। कान का दर्द दूर करने के लिए मूली के पत्तों को तेल में उबालकर वह तेल कान में डालना चाहिए। मूली का नियमित सेवन श्रवण शक्ति में लाभदायक है। घुटना, कंधा व अन्य जोड़ों की जकड़न को दूर करने में भी मूली का सेवन लाभप्रद है। गरम पानी में मूली का रस मिलाकर सूजन से पीड़ित स्थान पर लगाने से सूजन ठीक हो जाती है।

गुर्दे के रोग में भी मूली का सेवन बहुउपयोगी है। इससे गुर्दे की बीमारियां दूर हो जाती हैं। मूली के पत्तों सहित कूट पीस कर उसका रस निकालकर उसमें स्वादानुसार नमक मिलाकर प्रातःकाल पीने से पीलिया पूरी तरह ठीक हो जाता है। उपरोक्त गुणों को देखते हुए मूली के बारे में यह कहें कि मूली मात्र सब्जी नहीं, गुणों की खान है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं। सचमुच गुणों की खान है-**मूली**। ❑

ऐतिहासिक कहानी

अखण्डता के सजग प्रहरी : चाणक्य

❑ डॉ० रमाशंकर पाण्डेय

सम्राट चन्द्रगुप्त के शयनकक्ष में आधी रात तक महामंत्री चाणक्य राज्य सम्बन्धी मामलों पर मंत्रणा कर रहे थे। इसी बीच सम्राट ने जम्हाई ली। इसे देख अमात्य ने कहा— राजन् तुम थक चुके हो। रात अधिक बीत चुकी है। अब मैं भी विश्राम करने जा रहा हूं। एक बात है कि अब तुम मेरी एक इच्छा पूरी कर दो। मैंने तो तुम्हारी प्रायः सभी इच्छाओं को पूरी कर दिया है। नन्दवंश का पूर्णतया नाशकर तुम्हें सम्राट बनाया। यूनान देश के सेल्यूकस पर विजय करायी और उसकी लावण्यमयी लाडली हेलेन से तुम्हारी शादी करायी। अमात्य राक्षस जैसे दक्ष राजनीति विशारद को अमात्य पद किया। अब तुम्हारे राज्य की सुरक्षा का सब प्रबन्ध हो गया है। कहीं से कोई खतरा नहीं है। अब तुम मेरी यही इच्छा पूरी कर दो कि मेरी छड़ी, कम्बल और कमंडल इन तीनों चीजों को मुझे वापस दे दो। सम्राट मेरे जीवन का उद्देश्य अब तक के किये कार्य का नहीं है, वरन तुम्हारे भव्य महल से दूर अधिक एक पर्ण कुटीर में पूरा होगा। उम्र भी ढलने लगी है। तुम उच्च शिखर पर हो, भगवान तुम्हारी रक्षा करे, यही कामना है। खुले हृदय से तुम अभी मुझे विदा कर दो। कल सवेरे ही मैं अपनी स्वनिर्मित कुटी में चला जाऊंगा। कहते हुए अपना तीनों सामान लेकर जाने के लिए तैयार हो गये।

सम्राट के पास कोई चारा न था। उन्होंने याद किया कि गुरुदेव जब इसी भेष में प्रथम बार मिले थे कम्बल, सोटा और कमंडल ये ही तीनों चीजें थीं, शरीर पर विभूति थी। इस समय भी उनके कदम भी सधे सधाये उठ रहे हैं। राजभवन छोड़ने का मुखमंडल पर थोड़ा भी मलाल नहीं है। गजब के सिद्ध देव हैं गुरुवर चाणक्य। वे राजमहल के मुख्य द्वार तक आये, तब चाणक्य ने उन्हें लौटाते हुए कहा— 'राजन, आर्यावर्त्त का सारा भार तुम्हारे बलिष्ठ कंधों पर है। भगवान तुम्हारी रक्षा करे। सम्राट एकटक उधर ही देख रहे थे जिधर पथ पर सधे सधाये आचार्य के पैर उठ रहे थे। वे उसी तरह खड़े थे जब तक गुरुदेव आंखों से ओझल नहीं हो गये। फिर सजल नेत्र सम्राट अपने शयनकक्ष में आ गये। बिस्तर पर बड़ी देर तक वे करवट बदलते रहे, विचारों की आंधी चली पर अन्त में निद्रा देवी की बन आयी। सबेरे वे जागे पर मानसिक रूप से अस्वस्थ ही बने रहे। लाख मन को समझाया बुझाया पर मन उधर ही जा रहा था जिधर गुरुदेव की कुटिया थी। उन्होंने अपना रथ निकाला और चुपचाप अकेले ही घोड़ों को जोत कर चल पड़े। कुटी के पास आ रथ को रोका, घोड़ों की पीठ थपथपायी और दबे पांव कुटी तक आये। आहट मिली और चाणक्य ने दरवाजा खोला। सामने सम्राट हाथ जोड़े खड़ा थे। चाणक्य ने कहा— राजन, तुम आर्यावर्त्त के सम्राट हो। अपनी सुरक्षा से इस तरह मत खेलो। तुम्हारा उत्तरदायित्व तुम्हें इसकी अनुमति नहीं देता। अब मेरी चिन्ता कम कर राज्य की चिन्ता करो। हां, कभी कभार मेरे पास आ जाओगे। यों और किसी को पूर्व अनुमति के बिना आना मना है, पर तुम्हारे लिए कुटी में दरवाजा ही नहीं है, लेकिन सावधान मेरे पास आने से ज्यादा अच्छा होगा कि अपनी जवाबदेही पर अवलम्बित रहो। कहकर चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को आशीष दिया और उसे लौटाया।

इस घटना के दो चार महीने के बाद ही यूनान के राजदरबार में एक दिन एक वृद्ध सभासद ने पूछा— महान सिकन्दर युद्ध में पराजित तो नहीं हुए परन्तु भारतीय वीरों की शौर्यगाथा से प्रभावित होकर अपने देश लौटे परन्तु आप जैसा वीर परास्त होकर क्यों लौटा। सेल्यूकस ने कहा— हे सभासद, वीर चन्द्रगुप्त के शौर्य के आगे मेरी वीरता काम नहीं आयी, फिर तो मैं हारकर वापस चला आया। अगर चन्द्रगुप्त नहीं होता तो मैं हारकर नहीं आया होता। कहकर सेल्यूकस ने वृद्ध सभासद की ओर देखा।

सेल्यूकस की बात सुनकर वृद्ध सभासद बोला— हे सम्राट आप भ्रम में हैं। आपकी हार का कारण चन्द्रगुप्त का शौर्य नहीं है वरन है आर्यावर्त्त का अमात्य चाणक्य जिसने अपने बलबूते पर भारत को एक सूत्र में बांध दिया है। आज जो कुछ है उसी ब्राह्मण के बलबूते का शुभ फल है। उसी ने चन्द्रगुप्त को रास्ते से उठाकर राजसिंहासन पर आसीन किया है। आज भी सारी करामात उसी अद्भुत राजनीतिज्ञ फकीर

की है।

वृद्ध सभासद की बात सुनकर सेल्यूकस को आश्चर्य हुआ कि भारत में इतने दिनों तक रहने के बाद भी उसने यह नाम नहीं सुना था। उसने मन ही मन ठान लिया कि बहुत जल्दी ही वह उसी वीर शिरोमणि के दर्शनार्थ भारत की यात्रा करेगा।

बस एक सप्ताह बाद ही सेल्यूकस की भारत यात्रा प्रारम्भ हुई। वह नागराज हिमालय की कश्यप घाटियों को पार करता हुआ यत्र-तत्र पड़ाव रखता हुआ कई महीनों के बाद पाटलिपुत्र आया। अपने श्वसुर के आने पर सम्राट ने उनकी भावभीनी अगवानी की। सेल्यूकस ने अपनी बेटी को गले से लगा लिया। सम्राट का माथा चूमा। समाचार का कोरम पूरा हुआ। विश्राम कर सेल्यूकस ने जामाता से पूछा— पुत्र, तुम्हारे महामात्य आचार्य चाणक्य कहा हैं? मैं उनका दर्शन करना चाहता हूं।

सम्राट ने कहा— हे देव, आज से छह महीने पूर्व चाणक्य वानप्रस्थ ग्रहणकर दूर निर्जन स्थान में अपने हाथों से कुटी बनाकर अकेले ही रहते हैं। वहां उनकी पूर्व अनुमति के बिना किसी का जाना-आना असम्भव है। मेरे ऊपर उनकी विशेष कृपा है। इसी कारण मुझे पूरी छूट है। कहकर सम्राट ने अपने श्वसुर को साथ लिया और चल पड़ा कुटीर की ओर। कुटी के पास जाकर थोड़ी दूरी पर रथ रोका। दोनों पैदल चल कुटी तक आये। सम्राट का स्वागत हुआ और सेल्यूकस का परिचय पाकर चाणक्य खुश हुए। आसन पर बैठते हुए सेल्यूकस ने अपनी यात्रा के उद्देश्य का कारण बताया। सेल्यूकस की बातें सुनकर आचार्य बोले, हे यूनान राज्य के शासक सेल्यूकस, मैं संतुष्ट हूं कि आपने अपनी यात्रा का उद्देश्य प्रकट कर दिया। सम्राट जब आप प्रसिद्ध खैबर की घाटी में आये तभी से आपके पलपल की गतिविधि का ब्यौरा मेरे पास है, पर कहीं भी आपकी इस यात्रा का उद्देश्य का जिक्र नहीं है। अभी मुझे जानकारी हुई और अब मैं निश्चिन्त हो गया। कहते हुए चाणक्य ने यात्रा का पूरा-पूरा विवरण सेल्यूकस के सामने रख दिया।

यह देख यूनान सम्राट को आश्चर्य हुआ। मन ही मन देश के उस कुटी निवासी सजग प्रहरी को प्रणाम किया और सोचा कि जहां ऐसे त्यागी बैठते हैं जिनकी अपलक आंखें देशकी सुरक्षा पर लगी हैं वह देश तो सुरक्षित रहेगा ही। फिर उसने अपने वृद्ध सभासद को याद किया जिसकी कृपा से इस नरपुंगव के दर्शन हुए। उसने अपने जमाता से कहा जमाता! तुम धन्य हो कि तुम्हारे पास ऐसा अनमोल रत्न है। इस रत्न को राज्य की रक्षा के लिए सुरक्षित रखे। कहकर उसने चाणक्य की चरणरज अपने मत्थे लगायी और फिर कुटी के बाहर हो गये। उसे लगा कि यह भारत भगवान की निजी भूमि है। ऐसी भूमि चाणक्य जैसी विभूति ही को जन्म दे सकती है।

(पृष्ठ ३८ का शेष)

इसका सही उत्तर अब कुछ नहीं है, तब वह चालाकी से किसी समानता या भिन्नता का सहारा लेकर सत्य पक्ष वाले को धोखा देने का जो प्रयास करता है, उसे 'जाति' कहते हैं। जैसे— सत्य पक्ष वाले का कथन—'ध्वनि नष्ट हो जाती है क्योंकि वह उत्पन्न होती है। जो-जो वस्तु उत्पन्न होती है, वह-वह नष्ट होने वाली देखी जाती है, जैसे—कार। कार उत्पन्न होती है तथा नष्ट हो जाती है, ऐसे ही ध्वनि भी है। इसलिये उत्पन्न होने के कारण ध्वनि नष्ट हो जाती है।' अब दूसरे पक्ष वाले का (जातिवादी का) कथन—आपने कार का उदाहरण दिया। कार तो दीखती है परन्तु ध्वनि तो दीखती नहीं। इसलिये दीखने वाली कार नष्ट हो सकती है, न दीखने वाली ध्वनि क्यों हो, क्योंकि वह तो कार से भिन्न विशेषता वाला है। यहां जातिवादी ने चालाकी से कार तथा ध्वनि की एक भिन्नता का सहारा लेकर अनुचित रूप से खण्डन किया है। इसने सत्यवादी के हेतु 'उत्पन्न होने से' का कोई उत्तर नहीं दिया जो कि इसे देना चाहिए था।

(१६) **निग्रहस्थान**— इसका अर्थ है पराजय की अवस्था। और यह तब होती है जब व्यक्ति कुछ उल्टा-उत्तर देवे अथवा बिल्कुल चुप रहे। जैसे— किसी सत्य पक्ष वाले ने ऊपर के उदाहरण के अनुसार ध्वनि को नष्ट होने वाली सिद्ध कर दिया। तब दूसरे पक्ष वाला व्यक्ति बिल्कुल चुप रहे कुछ भी उत्तर न दे तो 'निग्रहस्थान कहलायेगा। अथवा इस प्रकार से गलत उत्तर दे कि 'कौन कहता है कि ध्वनि सदा रहती है, मैं भी यही मानता हूं कि ध्वनि नष्ट हो जाती है, जैसा आप मानते हैं।' यहां अपने पक्ष को ही छोड़ देने के कारण यह उत्तर गलत है, इसलिये 'निग्रहस्थान' कहलाता है।

इन सोलह पदार्थों के सत्य स्वरूप को जानकर हम मिथ्याज्ञान और बुरे कर्मों (पापों, अपराधों) से बच सकते हैं। समाज में प्रमाणों के आधार पर वास्तविक अपराधियों को खोजकर उन्हें दण्ड देकर न्याय की स्थापना कर सकते हैं।

आर्यवन, रोजड, पो-सागरपुर, जिला-साबरकांठा

उन सबकी दृष्टि में महात्मा वेदभिक्षुः का व्यक्तित्व

❑ मदन सिंह

महात्मा वेदभिक्षुः का प्रेरक जीवन, उनकी निर्भीकता, वेद प्रचार के प्रति अडिग आस्था से समाज के विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख जन के लिए प्रशंसा का पात्र तो बना ही था, साथ ही उनके कार्य की महत्ता को भी अनेक जन नेताओं ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया था। उनके सम्बन्ध में श्रद्धांजलि स्वरूप व्यक्त किए गए उद्‌गारों का सार संक्षेप में यहां प्रस्तुत है :-

अपनी धुन के पक्के और अत्यन्त साहस से सम्पन्न पुरुष हमारे बीच में हैं ही कितने। वेद के इतने प्रेमी थे कि वानप्रस्थ संस्कार के बाद उन्होंने अपना नाम 'वेदभिक्षुः' ही रख लिया। उनका वेदों का सैट कितना लोकप्रिय हुआ है, यह सर्वविदित है। दयानन्द, आर्य समाज और वेद ये तीनों बातें उनके समक्ष थीं। उनके व्यक्तित्व वैचित्र्य की स्मृतियां सभी प्रकार के लोगों को याद रहेंगी, जो भी उनके सम्पर्क में किसी भी प्रकार क्यों न आए हों। जिनके साथ वे काम कर सके, वे भी याद रखेंगे, जो उनके काम में हाथ बंटाने में असमर्थ रहे वे भी याद रखेंगे। **—स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती**

आर्य समाज के बहुत बड़े कार्यकर्ता, तपस्वी वानप्रस्थी श्री वेदभिक्षुः जी ने सारे जीवन आर्य समाज का कार्य किया। इसके लिए उन्होंने बहुत कष्ट सहा और आर्थिक हानियां भी उठाईं, किन्तु अपने कार्य में वे सदा आगे ही बढ़ते रहे। आर्य समाज की हर चीज को वे बहुत ध्यान से देखते थे। देश के किसी कोने में भी आर्य समाज के विपरीत कोई भी गतिविधि हो, उसके निराकरण के लिए सदा प्रयत्न करते रहते थे। उनके विदा होने से आर्य समाज की बहुत बड़ी हानि हुई।

—स्वामी सर्वानन्द, दयानन्द मठ, दीनानगर

जीवन के अन्तिम समय तक एक योद्धा के समान कर्त्तव्य परायण वह वैदिक यति राष्ट्र रक्षा और वैदिक साहित्य के प्रचार और हिन्दू संगठन कार्य में जुटा रहा। ऐसे कर्मवीरों के लिए किसी उर्दू शायर ने ठीक ही कहा था-

किसी की चार दिन की जिन्दगी सौ काम आती है।
किसी की सौ बरस की जिन्दगी से कुछ नहीं बनता।

—पं० शिव कुमार शास्त्री, पूर्व सांसद

वे स्वयं में एक चलती फिरती संस्था थे। आर्य समाज के क्षेत्र में अनेक संस्थाओं ने साहित्य रचना की दृष्टि से प्रयास किए। भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षुः) ने दयानन्द संस्थान की स्थापना करके वैदिक साहित्य के क्षेत्र में जो प्रभावशाली काम किया, वह अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है। वे एक धारा प्रवाह वक्ता थे। किसी भी विषय पर बोलना उनके लिए साधारण कार्य था। यह सब उनके गहन स्वाध्याय का फल था। वेद मन्दिर की स्थापना करके उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के पिपासुओं के लिए जो अनुकरणीय प्रयत्न किया है, वह सदैव उनकी स्मृति ताजा रखेगा। उनके द्वारा अधूरे छोड़े गए कार्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है।

—स्वामी आनन्दबोध सरस्वती

जीवन की अंतिम संध्या तक उन्हें बड़ी से बड़ी बाधाओं व संकटों की घड़ियां भी कभी विचलित नहीं कर सकीं। "किसी ने साथ दिया या नहीं बाधाओं, संकटों के आगे झुक नहीं सकता।" उस उक्ति को महर्षि दयानन्द के पंथानुयायी ने अपने जीवन वृत्त से साकार किया।

—सच्चिदानन्द शास्त्री, सा० आ० प्र० सभा

मैं अपने पास रखी उनके द्वारा प्रदत्त अनेक पुस्तकों को देखता हूं तो उनका मुस्कुराता मुखमंडल मेरे सम्मुख आ जाता है। वे वर्तमान परिस्थितियों से निराश थे परन्तु कहते थे कि सबको देखकर हम अकर्मण्य नहीं बैठ सकते, कभी तो इस जाति में प्राण आएंगे।

—डॉ० कृष्णलाल, दिल्ली विश्वविद्यालय

समय-समय पर आर्य समाज ने जो आंदोलन प्रारम्भ किए उन्हें साहित्य के माध्यम से श्री भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षुः) ने जन आंदोलन बनाकर सार्वभौम क्षेत्र प्रदान किया। युकेरिस्टिक कांग्रेस के समय ईसाइयत के विरुद्ध उन्होंने मोर्चा खोला था तो मीनाक्षीपुरम की घटना के पश्चात धर्मान्तरण के विरुद्ध। **—जयदेव आर्य**

उनके निधन से हिन्दू समाज की अपार हानि हुई। राष्ट्र के वर्तमान संकटों में संघर्ष में रात-दिन एक करके तिल-तिल कर मरने वाले उस शहीद को सादर नमन। परम पिता परमात्मा करे कि उनके अधूरे काम को आपके (पं० राकेशरानी) के नेतृत्व में हमलोग संभालने योग्य बन जाएं।

—गजानन्द आर्य, परोपकारिणी सभा

महात्मा वेदभिक्षुः के अत्यन्त घनिष्ठ रहे विख्यात पत्रकार आदरणीय श्री बनारसी सिंह जो दयानन्द संस्थान के प्रति पूर्ण समर्पित सहयोगी हैं के विचार निम्न हैं :-

उनके अन्तिम यात्रा के जीवन चरण में भी उन्हें कभी निराशा नहीं सता पाई अपितु उन्होंने अपने महाप्रयाण से कुछ ही दिन पूर्व वार्ताक्रम में अपना दुर्दम्य विश्वास भी व्यक्त किया था कि हमसे जो कुछ बन पड़ा हम कर चले। किन्तु हमारा विश्वास है कि वह शुभ घड़ी अवश्य आएगी जब सुप्त समाज का पौरुष जागेगा और तन्द्रागत आर्य समाज और विश्व कल्याण की भूमिका निभाने का दायित्व ओढ़ने वाला हिन्दुत्व प्रखर होगा और फिर भारत राष्ट्र अपने ओजस्वी रूप को प्राप्त कर युग के किसी श्रीकृष्ण के सबल नेतृत्व में सुसंगठित होकर यह उद्‌घोष करेगा— **स्थितोऽस्मि गत सन्देहः करिष्ये वचनं तव।**

महात्मा वेदभिक्षुः

❑ भिक्षु दिवस्पुत्र भारथी वानप्रस्थ

जग जाहिर है कि महात्मा वेदभिक्षुः का मिशन वेद प्रसार ही था। इसी मूल उद्देश्य के प्रति वे समर्पित भाव से मरणपर्यन्त जुटे रहे। उनकी आत्मा वेद विषय में अत्यन्त संवेदनशील थी। उन्हें किसी भी स्रोत से वेद विषयक कोई लेख अथवा ग्रंथ कहीं से भी मिल जाता था तो वे उसे प्रकाशित करके ही छोड़ते थे। उनका जीवन अपने लिये नहीं प्रत्युत वेद के लिये था। यह कौन नहीं जानता कि चारों वेदों के प्रसार में जो उद्यम उन्होंने किये उसकी इस पृथिवी पर एक भी मिसाल नहीं। यदि वे कुछ समय और हमारे मध्य में रहते तो न जाने वेद पर अब तक कितने महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो सकते थे।

आज उनका वेद मन्दिर इब्राहीमपुर दिल्ली उनकी स्मारिका तो बन गई है किन्तु उनके अधूरे कार्य तथा वह बलबले सब वहीं के वहीं रह गये। ऐसा लगता है जैसे काल कहीं पर थम गया है। पंडिता राकेशरानी जी (उनकी धर्मपरायणा पत्नी) एकाकिनी जूझ रही हैं और अपनी ओजस्विनी वाणी के माध्यम से महात्माजी के चरणों में निरन्तर सुमन अर्पित करती चली आ रही हैं। 'जनज्ञान' सतत प्रकाशित हो रहा है। सहस्रों पाठकों वेद, उपनिषद्, दयानन्द की विचारधारा में गोता लगा रहे हैं। संसार बहुत कठोर एवं निर्दय है जहां व्यक्ति का मूल्यांकन कोरा शून्य ही रह जाता है। महात्मा वेदभिक्षुः वेदों के प्रांगण में सदैव प्रासंगिक रहेंगे। उनका स्थान भला कौन ले सकता है। एक भिक्षुक ब्राह्मण वेदों के प्रसार के लिए दर-दर भटकता रहा। जिसने उनकी झोली में कुछ डाला उनका भी भला जिसने नहीं डाला उनका भी भला। उनका हृदय वेद सागर के तरंगों पर डोलता रहता था। जिस ओर उनका पग उठा था और आगे बढ़े थे उनके संगी-साथी सब पीछे रह गये। वे समस्त धरती को अपना घर और गांव समझते रहे। वे जानते थे कि वेद संदेश से ही मानव का उद्धार होगा। सहस्रों मन्त्रों को पढ़कर वे मचल उठते थे। प्रत्येक मन्त्र में एक विज्ञान सम्मत एवं चमत्कारपूर्ण अर्थ से अपनी आत्मा को आलोकित करते थे। एतदर्थ वेदार्थ को 'जन ज्ञान' बनाने में निरन्तर लगे रहे।

हिन्दुत्व को ऊपर उठाने में जनज्ञान उनका एक अमोघ शस्त्र था। वेद वाणी को प्रभु की वाणी समझकर तदनुसार उपासना में रत रहे। वे चाहते थे कि हिन्दू समाज एक साथ मिल कर वेद ध्वजा को उठाकर धरती को वेदमयी कर डालने में जरा भी विलम्ब न करे।

रवीन्द्र बाबू की कविता है "एकला चलो रे" अर्थात् कोई तुम्हारे साथ आये न आये तुम अपने पवित्र ध्येय के लिये अकेले चल पड़ो। वे आये अकेले थे और अन्त में अकेले ही चल दिये। लोग ठगे से रह गये। संभवतः प्रभु ने उन्हें इससे भी बड़े किसी लोक में वेद प्रसार के लिये धरती से उठा लिया हो।

प्रकाशनादि विवरण फार्म–४

१.	प्रकाशन स्थान	: २२८६, आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-५
२.	प्रकाशन अवधि	: मासिक
३.	मुद्रक का नाम	: राकेशरानी
	क्या भारत का नागरिक है।	: हां
	पता	: २२८६, आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-५
४.	प्रकाशक का नाम	: राकेशरानी
	क्या भारत का नागरिक है।	: हां
	पता	२२८६, आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-५
५.	सम्पादक का नाम	: राकेशरानी
	क्या भारत का नागरिक है	: हां
	पता	२२८६, आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-५

६. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।

जनज्ञान प्रकाशन, नई दिल्ली

में राकेशरानी एतद्द्वारा घोषित करती हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी व विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

दिनांक : १.३.१९९७ राकेशरानी, प्रकाशक

३० मार्च जिनका जन्मदिवस है

वेद भाष्यकार पं० विश्वनाथ विद्यालंकार

—मनमोहन आर्य

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपनी अद्भुत बौद्धिक क्षमता, तर्क व प्रमाणों के आधार पर सृष्टि के आदि में प्रकाशित ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद तथा सामवेद को ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध किया था। उनकी चुनौती थी कि यदि आरम्भ में ईश्वर ने वेदों का ज्ञान न दिया होता तो अभी तक मनुष्य ज्ञानहीन, निबुद्धि एवं भाषा से रहित होता। वेदों की महत्ता के कारण ही वे आर्य समाज के तीसरे नियम में वेदों को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक घोषित करके इनका पढ़ना-पढ़ाना तथा सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म निरुपित करते हैं। पं० विश्वनाथ विद्यालंकार ने दयानन्द के वेद भाष्य को गुरु बनाकर एवं स्वयं के अथक परिश्रम से वेदों के ज्ञान को प्राप्त कर अपना सारा जीवन योग्य शिष्य तैयार करने एवं वैदिक साहित्य के प्रणयन में व्यतीत किया। वेदों के विद्वान् उनके शिष्यों में डॉ० (आचार्य) रामनाथ वेदालंकार, जयदेव विद्यालंकार, आचार्य प्रियव्रत, पं० बुद्ध देव जी, पं० सत्यकाम जी, डॉ० सत्यव्रत, पं० भगवद्दत्त, सत्यभूषण विद्यालंकार, हरिदत्त वेदालंकार, क्षितीज वेदालंकार, सुरेश चन्द्र विद्यालंकार एवं मनोहर विद्यालंकार आदि का नाम अन्यतम है।

पं० विश्वनाथ का जन्म ३० मार्च सन् १८९२ को वजीराबाद जिला गुजरांवाला में (सम्प्रति पाकिस्तान में) हुआ था। उनकी शिक्षा-दीक्षा स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में हुई जहां वह सन् १९१४ में सर्वप्रथम रहकर स्नातक बने। वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, दर्शन शास्त्र एवं रसायन शास्त्र उनके विषय थे। सन् १९१४ में ही वह गुरुकुल में उपाध्याय नियुक्त हुए और निरन्तर २८ वर्षों तक वेद एवं वैदिक साहित्य का अध्यापन कर सन् १९४२ में सेवानिवृत्त हुए।

सेवाकाल में जहां पंडित जी ने गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को वेदों की शिक्षा दी वहीं छात्रों के व्रतपालन, उनके चहुंमुखी विकास, गुरुकुल की साहित्य संजीवनी सभाओं में भाषण से छात्रों का ज्ञानवर्धन, विदेशी आगन्तुकों का वैदिक धर्म व संस्कृति से परिचय आदि विविध कार्य भी किये। वैदिक यज्ञ मीमांसा, वैदिक जीवन, संध्या रहस्य, बाल सत्यार्थ प्रकाश जैसे ग्रंथ सेवाकाल में लिखकर अपने विस्तृत स्वाध्याय, ज्ञान एवं लेखन क्षमता का परिचय दिया। सेवानिवृत्त के पश्चात आपने सामवेद एवं अथर्ववेद भाष्य सहित ऋग्वेद परिचय, अथर्ववेद परिचय, यजुर्वेद स्वाध्याय तथा पशु यज्ञ समीक्षा, शतपथ ब्राह्मणस्थ, अग्निचयन समीक्षा, वैदिक गृहस्थाश्रम, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, का सरल तथा वीर माता का उपदेश आदि की रचना कर वेद के ईश्वरीय ज्ञान एवं मानव मात्र के लिए उपयोगी होने की पुष्टि की। सन् १९४२ के पश्चात आपने राजाधिराज उम्मेद सिंह जी के राज्यरोहण काल में राजसूय पद्धति नामक एक पुस्तक भी लिखी जो अप्रकाशित है।

पंडितजी ने वेद भाष्य सहित जो ग्रंथ लिखे हैं, उनके प्रकाशन का श्रेय मुख्य रूप से करनाल के राय साहिब चौधरी प्रताप सिंह को है। जिन्होंने पंडित जी को लेखन की ओर प्रवृत्त कर आर्थिक सहायता की। मृत्यु से एक माह पूर्व भी पंडित जी ने इन पंक्तियों के लेखक से वार्तालाप में प्रताप सिंह के योगदान का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया था। अन्य प्रमुख सहयोगी वेद वेदांग एवं विश्वभारती पुरस्कार से सम्मानित पं० युधिष्ठर मीमांसक, दयानन्द संस्थान, दिल्ली के संस्थापक अध्यक्ष महात्मा वेदभिक्षु:, गोविन्दराम हासानन्द के स्वामी विजय कुमार, अजय कुमार, रामलाल कपूर ट्रस्ट एवं श्रीमती सावित्री देवी बागडिया धमार्थ ट्रस्ट रहे।

पंडित जी समय-समय पर प्राय: प्रमुख आर्य सामाजिक पत्र-पत्रिकाओं में वैदिक विषयों पर शोधपूर्ण लेख लिखकर वैदिक विद्वानों को भरपूर ज्ञानवर्धक सामग्री उपलब्ध कराते रहे। दिसम्बर १९७४ में विश्व ज्योति पत्रिका में "सविता का आध्यात्मिकस्वरूप", परोपकारी अजमेर में मई, १९७९ अंक में "वैदिक सार्वभौम संभावनायें", जून-जुलाई १९७८ में विश्व ज्योति, होशियारपुर में प्रकाशित "वैदिक योग विभूतियां" परोपकारी के अगस्त १९७८ अंक में "वैदिक अन्न विभाजन" वेदवाणी, बलाहगढ़ नवम्बर १९८१ में तीन वेदों की छन्द: संख्या तथा अक्षर संख्या पर परोपकारी अक्टूबर १९८८ में "अग्निहोत्र आध्यात्मिक" आदि प्रमुख लेख पठनीय है। लेखक

एवं प्रकाशक उन्हें जो प्रकाशन भेजते थे, उन पर पंडित जी अपनी सम्मति भी लिखकर प्रेषित करते थे।

पंडित विश्वनाथ के पिता वजीराबाद गुजरांवाला (लाहौर के निकट) के मृत्यु से पूर्व तक प्रधान रहे। रोलेट एक्ट के विरोध में नंगे सिर-पैर होकर आपने आंदोलन किया। गिरफ्तार होने पर केस चला तथा कालापानी की सजा दी गयी। वृद्धावस्था के कारण ६ माह बाद कारावास से मुक्त कर दिया गया था।

पंडित जी होम्योपैथी चिकित्सा प्रणाली के भी ज्ञाता थे। उन्हें राज्य होम्योपैथी बोर्ड, उ० प्र० ने ४ दिसम्बर १९५४ को पंजीकृत चिकित्सक का प्रमाण पत्र प्रदान किया था। पंडित जी की इच्छा थी कि उनके द्वारा रचित अथर्ववेद भाष्य के शेष खंड भी उनके जीवनकाल में प्रकाशित हो जायें। मृत्यु से कुछ दिन पूर्व फरवरी १९९१ में उक्त इच्छा व्यक्त कर उन्होंने अथर्ववेद भाष्य के कांड २ व ३ की पाण्डुलिपि इन पंक्तियों के लेखक को सौंप दी थीं। ईश्वर की इच्छा एवं पंडित जी की आगामी कुछ दिनों बाद ही मृत्यु के पूर्वाभाव से अनभिज्ञ उनकी पुत्री व लेखक यह देखकर दंग रह गये। आश्चर्य का एक कारण उनकी पुत्री का यह कथन भी था कि पंडित जी का घर में कड़ा अनुशासन था। उनके कागजों एवं लेखन सामग्री को बिना उनकी आज्ञा छूना संभव नहीं था। ईश्वर पं० युधिष्ठिर मीमांसक, डॉ० रामनाथ वेदालंकार, रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, पं० विजयपाल एवं जीवनलाल जी की कृपा एवं सहयोग से पंडित जी की उक्त पाण्डुलिपि प्रकाशित हो सकी इसका लेखक को संतोष है।

अपने प्रगाढ़ वैदिक वैदुष्य तथा अमर साहित्य की साधना के कारण पूज्य पंडित जी को कई संस्थाओं ने सम्मानित तथा पुरस्कृत करके स्वयं को सौभाग्यशाली माना है। पंडित जी की मातृसंस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने अपनी सर्वोच्च पुरोपाधि विद्यामार्तण्ड से सन् १९५० में आपको सत्कृत किया। आर्य समाज सान्ताक्रूज बम्बई ने सन् १९८७ में आपको वेद वेदांग पुरस्कार से सम्मानित किया। गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार से सन् १९७९, में पंडित गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार से सन् १९८३ में, उ० प्र० संस्कृत अकादमी द्वारा अथर्ववेद भाष्य आदि पर आप पुरस्कृत किये गये। आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के मंत्री धर्मेन्द्र सिंह आर्य द्वारा गठित सम्मान समिति की ओर से भी मृत्यु से कुछ समय पूर्व कन्या गुरुकुल देहरादून में वह सम्मानित किये गये थे। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री वीरेन्द्र एवं अन्य पदाधिकारियों को भी साथ में सम्मानित किया गया।

पंडित जी का जीवन सादगी से पूर्ण था। अतिथियों के सत्कार का उन्होंने सदैव ध्यान रखा। संस्कृत साहित्य के कुछ अध्येता सम्प्रति पंडित जी एवं उनकेकार्यों पर शोध कर रहे हैं। उनके ४ पुत्र व तीन पुत्रियों में से दो पुत्र दिवंगत हो चुके हैं। छोटी पुत्री श्रीमती इन्दिरा खन्ना ने उनकी पूर्ण योग से सेवा की। अल्पकालीन बीमारी के पश्चात् ११ मार्च १९९१ को उनका देहरादून में स्वर्गवास हो गया। १५ अप्रैल १९९२ को उनकी पत्नी कुन्ती देवी का देहान्त हुआ।

देहरादून

भारत का सौभाग्य

भारत का सौभाग्य
यहां हिन्दुत्व अमर है।
आये कितने पंथ यहाँ
पर हुआ न तनिक असर है।
बलिवेदी पर चढ़े यहाँ
पर धर्म कभी ना खोया
शूली पर चढ़ने वाला भी
वीर कभी ना रोया।
बने नींव के पत्थर जिन पर,
धर्म ध्वज फहराता है
हिन्दू का बच्चा-बच्चा सब
उनकी ही जय गाता है।
मिटे यहां से कितने
पर यह धर्म न मिटने पाया।
रक्षा करने वीर यहां पर
कफन बांध कर आया।
हमें वीरता में गौरव को
कभी नहीं खोना है।
एक सूत्र में बंधकर सबको
सदा एक होना है।

—सत्येन्द्र त्रिवेदी

आन्तरिक वस्त्रों में अग्रणी-ग्रोवर सन्स

आजकल के इस कम्प्यूटर युग में महिलाओं की इच्छाओं के साथ-साथ उनकी आवश्यकताओं में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं। कल की सुविधाएं आज की जरूरत बन गई हैं इस तरह महिलाओं के रहन-सहन में आधुनिक क्रांति आई है। लेकिन रेडीमेड वस्त्रों में पहला क्रांतिकारी परिवर्तन आज से करीब १०० साल पहले ही हो गया जब फ्रांस के हरनाम रैडशेली ने पैरिस में ब्रेजियर का आविष्कार किया था। तब से आज तक में ब्रेजरी उद्योग में अनेक परिवर्तन हुए हैं। आज से लगभग तीस वर्ष पूर्व महिलाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए चमन लाल ग्रोवर के नाम से अंतरराष्ट्रीय स्तर के ब्रा एवं पैंटीज का उत्पादन शुरू किया।

ग्रोवर सन्स के ब्रा एवं पैंटिज सादे डिजाइनों के साथ-साथ एक से बढ़कर एक फैंसी, डिजाइनों में उपलब्ध हैं। जो मूर्त रूविया, टेरीकाट, कैमारिक तथा विभिन्न सिंथेटिक कपड़ों तथा नायलान लैस के कपड़ों से बनाई जाती हैं। दिल्ली के प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र करोल बाग के ग्रोवर सन्स के डायरेक्टर राकेश ग्रोवर ने एक भेंट में बताया कि ग्रोवर सन्स द्वारा बनाए जा रहे स्पर्श शालिनी, सरिता ब्रा एवं पैंटीज की फैंसी रेंज के सभी प्रांतों के हर वर्ग की महिलाओं के फैशन के अनुसार आधुनिक डिजाइन में बनाए जाते हैं।

समाचार दर्शन

आर्य उपदेशक सम्मेलन

मुसाफिरखाना। स्थानीय आर्य समाज एवं वैदिक शिक्षा संस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री रामखत्री धर्मशाला के प्रांगण में आर्य उपदेशक सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में पूर्वी उ० प्र० के सोलह जनपदों के लगभग २५० प्रतिनिधियों एवं आर्य उपदेशकों ने भाग लिया। विभिन्न चरणों में आठ गोष्ठियां हुई। इन गोष्ठियों में, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आर्य समाज एवं महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों की प्रासंगिकता पर विचार विमर्श हुआ। इस अवसर पर आर्य समाज के आन्दोलन में आये व्यवधान, उनके कारण और निवारण पर आत्म विश्लेषण किया गया। सर्वसम्मति से पारित एक प्रस्ताव द्वारा प्रान्तीय एवं केन्द्रीय आर्य नेतृत्व से आपसी मतभेद भुलाकर महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार करने हेतु कटिबद्ध होने की मार्मिक अपील की गई। वक्ताओं ने गोष्ठियों में दिल खोलकर अपने विचार रखे और आत्मविवेचन किया।

इस सम्मेलन में पांच प्रमुख उपदेशकों डा० दालचन्द्र वानप्रस्थी (जबलपुर) पं० सत्यदेव शास्त्री (काशी), श्री जलेशरमुनि वानप्रस्थी (लखनऊ), आर्यमुनिजी वानप्रस्थी (जौनपुर) तथा श्री लेन नारायण (गोरखपुर) को डा० रामकृष्ण शास्त्री ने शाल देकर सम्मानित किया।

आर्य समाज जामनगर का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज जामनगर का ७०वां स्थापना दिवस एवं अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस मनाया गया। इस उपलक्ष्य में जामनगर जिले की सभी कन्या विद्यालयों की कन्याओं की विभिन्न विषयों पर वक्तृत्व स्पर्धाओं का आयोजन किया गया। उपदेशक विद्यालय टंकारा के प्राचार्य पंडित विद्यादेव शास्त्री व ब्रह्मचारीगण विशेष रूप से पधारे। श्रीमद्दयानन्द कन्या विद्यालय जामनगर की छात्राएं, आर्य समाज जामनगर के पदाधिकारी एवं उपदेशक विद्यालय टंकारा के ब्रह्मचारियों ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को श्रद्धांजलि अर्पित की।

आर्य समाज नासिक

आर्य समाज नासिक के चुनाव में निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए। श्री गुलशन कुमार चड्ढा—प्रधान, डॉ० चन्द्रकान्त गर्जे— उप प्रधान, श्री माधव के० देशपांडे— मंत्री तथा इन्द्रजित भाटिया— कोषाध्यक्ष।

आर्य समाज भटौली (बदायूं) का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज भटौली (बदायूं) का ४०वां वार्षिकोत्सव एवं महायज्ञ १३, १४, १५ फरवरी को धूमधाम से मनाया गया। उत्सव में स्वामी ब्रह्मानन्द 'वेदभिक्षु' (चन्दौसी), श्री भानुप्रकाश आर्य 'भजनोपदेशक' रोहनिया (बरेली) उदलय आर्य 'भजनोपदेशक' सहसवान (बदायूं) आदि विद्वानों ने पधार कर कार्यक्रम को सफल बनाया। उत्सव में मद्यनिषेध महिला सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन आदि सम्पन्न हुए।

श्री रामप्रसाद पोद्दार राष्ट्रीय पुरस्कार

अग्रोहा। अग्रोहा विकास ट्रस्ट द्वारा गठित श्री रामप्रसाद पोद्दार राष्ट्रीय पुरस्कार १९९६ श्री शीतलकुमार तिलकराज अग्रवाल को अग्रोहा धाम में शरद पूर्णिमा के मेले के अवसर पर ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री सुभाष चन्द्र ने प्रदान किया। पुरस्कार के अन्तर्गत १ लाख रुपए का चैक तथा शाल श्रीफल के साथ एक प्रशस्तीपत्र भी दिया गया। इस अवसर पर ट्रस्ट के मंत्री श्री स्वरूपचंद गोयल ने श्री शीतल कुमार अग्रवाल का परिचय दिया।

आर्य विद्वान के निधन पर शोक

बणी पूंडरी (कैथल) आर्य जगत् के प्रख्यात विद्वान डॉ० वेदपाल जी मुनीथ के स्वर्गवास पर गुरु ब्रह्मानन्दाश्रम (बणी) में गहरा शोक व्यक्त किया गया। श्री अजेय ब्रह्मचारी ने उनके कार्यों का मूल्यांकन करते हुए बताया कि वे आर्य जगत् के दिग्गज विद्वानों में एक थे। उनकी प्रारम्भिक वैदिक शिक्षा गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ में हुई थी। इन्होंने पुष्कर के निकट वैदिक आश्रम की स्थापना करके अपना तन, मन, धन सब आर्य समाज को सौंप दिया था।

शोक समाचार

सुप्रसिद्ध आर्य समाजी श्री रविन्द्र नविश का रिटाबाड़ी गुवाहाटी में स्वर्गवास हो गया। ८५ वर्षीय श्री नविश पिछले कुछ दिनों से अस्वस्थ थे। आर्य समाज मन्दिर, गुवाहाटी में एक शोक सभा आयोजित की गई, जिसमें समाज के सभी सदस्यों तथा पदाधिकारियों ने दो मिनट मौन धारण रख दिवंगत आत्मा की शान्ति तथा शोकसन्तप्त परिवारजनों के ढाढ़स हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना की। ●●●

आर्य समाज श्री गंगानगर के संरक्षक प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी श्री डॉ० ईश्वरदास तलवाड़ का १९ जनवरी रविवार प्रातः आकस्मिक देहावसान हो गया। वे बड़े निष्ठावान आर्य थे। अपना अन्तिम संस्कार वैदिक विधि से कराने के लिए वे मृत्यु के पूर्व ही लिख कर रख गए थे। उनकी अन्तिम इच्छानुसार आर्य समाज के पुरोहित श्री रामनिवास ने उनका अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न कराया।

जनज्ञान मासिक मंगाने के नियम

१. 'जनज्ञान' के पाठक पत्र व्यवहार करते समय अपनी सदस्य संख्या अवश्य लिखें। (सदस्य संख्या 'जनज्ञान' के रैपर पर लिखे पते केसाथ अंकित रहती है।)

२. 'जनज्ञान' प्रतिमाह पांच और छः तारीख को पाठकों को भेज दिया जाता है।

३. मास के अन्त तक 'जनज्ञान' न मिले तो शिकायत आने पर दोबारा भेज दिया जाता है।

४. 'जनज्ञान' की एक प्रति का मूल्य छः रुपये है। वार्षिक शुल्क सत्तर रुपये है। आजीवन शुल्क ५०१ रुपये है।

५. शुल्क समाप्ति की सूचना प्रत्येक सदस्य को एक मास पहले भेज दी जाती है। पत्र के साथ मनीआर्डर फार्म और पोस्टकार्ड संलग्न होता है। कृपया पोस्ट कार्ड पर उत्तर अवश्य दें।

६. आगामी वर्ष के लिए नया शुल्क मनीआर्डर न मिलने पर अगला अंक वार्षिक शुल्क के साथ वी०पी० द्वारा भेजा जाता है। वी०पी० में बारह रुपये डाक व्यय अतिरिक्त लगता है। जिसका लाभ न तो सदस्यों को और न ही संस्था को होता है। अतः कृपया सूचना मिलते ही तुरन्त मनीआर्डर भेज देंवे अथवा संलग्न कार्ड पर उत्तर अवश्य दें।

—सम्पादक

"जन-ज्ञान" प्रसार अभियान में योगदान ऋषि भक्तों-हिन्दुत्वनिष्ठों से आह्वान

- 'जनज्ञान मासिक' मात्र एक पत्रिका ही नहीं अपितु आन्दोलन है।
- राष्ट्रद्रोही तत्वों के षड़यन्त्रों का भण्डाफोड़ और राष्ट्रभक्तों को सुस्पष्ट समर्थन ही हमारी नीति है।
- देव दयानन्द कीं विचारधार का प्रचार-प्रसार हमारा संकल्प है।
- "सत्य के अर्थ" का प्रकाश हमारा व्रत है।
- वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्व की मानव कल्याणकारिणी विचारधारा के हम प्रसारक हैं।
- राष्ट्र की एकता और अखण्डता तथा सुरक्षा के लिए जन-जागरण ही हमारा कार्यक्रम है।
- "जनज्ञान" व्यवसायिक नहीं एक वैचारिक मासिक पत्रिका है। वार्षिक शुल्क ६० रुपये है। आजीवन ५०१ रु० है।
- **अपने प्रतिष्ठान का विज्ञापन देकर हमारा सहयोग करें।**

आपका सहयोग ही जनज्ञान का सम्बल है। हमारा आप सब कृपालु पाठकों से आह्वान है कि राष्ट्रनिर्माण के इस अनुष्ठान को गतिमान रखने के लिए अपने सहयोग का हाथ और बढ़ायें। जनज्ञान को घर-घर में पहुँचाकर वैदिक संस्कृति और हिदुत्वनिष्ठा का प्रकाश फैलाएं।

अपने नगर में जनज्ञान की एजन्सी स्थापित करें। नियम पत्र मगायें।

वेद प्रचार और धर्म रक्षा अभियान यही है इस युग का प्रखर आह्वान।
कर्त्तव्य की यही है प्रबल पुकार, शुद्धि-संगठन, कार्य का हो विस्तार॥
इन संकल्पों की पूर्ति हेतु संकल्पबद्ध, आपके अपने है प्रतिष्ठान—

दयानन्द संस्थान और जनज्ञान

भारत के प्राचीन गौरव की स्थापना हेतु वेद प्रचार और हिन्दू धर्म रक्षक अभियान में अधिक से अधिक सहयोग देकर अपना कर्त्तव्य निभाइये।

२२८६, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-५
कार्यालय फोन : ५७२४७४१ वेदमन्दिर : ७२०२२४९

जन-ज्ञान (मासिक) वेद मन्दिर महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम लेखरामनगर (इब्राहीमपुर) पो. आ. मुखमेलपुर, दिल्ली-११००३६

फाल्गुन 2053
मार्च 1997

Posted at N.D. PSD on Date 5 & 6-Delhi postal Registration No DL-11185/97 R.N. 10719.65

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

1.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	मूल्य 1600 रु०
2.	सामदेव : आध्यात्मिक भाष्य (पं. विश्वनाथ विद्यामार्त्तण्ड)	101 रू.
3.	वेद-ज्योति चारों वेदों के चुने हुये 100-100 मन्त्रों की व्याख्या)	30 रू.
4.	वेदांजलि : (वर्ष के 365 दिनों के लिए 365 वेद मन्त्रों की व्याख्या)	50 रू.
5.	सोमसरोवर : (सामवेद के पावमान पर्व की व्याख्या)	50 रू.
6.	भारत के वीर बच्चों की कहानियां	6 रू.
7.	संस्कार विधि (सजिल्द)	30 रू.
8.	सरस्वतीन्द्र जीवन (महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र)	50 रू.
9	महर्षि दयानन्द सरस्वती (जीवन परिचय)	10 रु०
10	धर्म का सार (धर्म का रहस्य बताने वाली कथाएं)	6 रु०
11	स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती (जीवन परिचय)	4 रु०
12.	वादक सम्पात	151 रू.
13.	धर्म का मार्ग (धर्म के दस लक्षणों की सरल व्याख्या)	6 रू.
14.	योगासन	4 रू.
15.	योग और ब्रह्मचर्य	6 रू.
16.	Concept of God	50 रू.
17.	श्रीमद्दयानन्द प्रकाश	10 रू.
18.	Light of Truth	10 रू.
19.	प्रकृति और सर्ग (आचार्य उदयवीर शास्त्री)	50 रू.
20.	वैदिक गीता का सरल हिन्दी भाष्य	50 रू.
21.	संक्षिप्त महाभारत	50 रू.
22.	संक्षिप्त रामायण	15 रू.
23.	ऋग्वेद-शतकम	6 रू.
24.	वैदिक सान्ध्य गीत	6 रू.
25.	गायत्री मन्त्र का चार्ट, हिन्दी व्याख्या सहित दोनों ओर पत्ती लगा, कम से कम दस प्रति मंगायें	3 रू.

100 से अधिक साहित्य पर कमीशन 15 प्रतिशत 300 से अधिक लेने पर 20 प्रतिशत तथा 500 से अधिक लेने पर 25 प्रतिशत होगा। **आदेश के साथ चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।**

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य बांटिये

1.	मोपला (उपन्यास) - वीर सावरकर	6.00 रू.
2.	क्या आप सारा भारत दारूल इस्लाम बनने देंगे ?	1.00 रू.
3.	हिन्दुओं को चेतावनी - वेदभिक्षुः	1.00 रू.
4.	भारत के मुसलमानों का क्या करें ? - वेदभिक्षुः	1.00 रू.
5.	हम सब हिन्दू हैं - वीर सावरकर	1.00 रू.
6.	पोस्टर दो प्रकार के	2.00 रू.
7.	इस्लाम में क्या है ? - सतेश चन्द्र	1.00 रू.
8.	इस्लामिस्तान बनाने की तैयारियां -जहीर नियाजी	1.00 रू.
9.	हिन्दू जागो! देश बचाओ	1.00 रू.
10.	इस्लाम - एक परिचय	1.00 रू.
11.	A Challange to the Christian Faith	50 पैसे
12.	पोप की सेना का भारत पर हमला -वेदभिक्षुः	1.00 रू.
13.	पादरियों को चुनौती	1.00 रू.
14.	बाईबल की चुनौती	1.00 रू.
15.	क्या ईसा खुदा का बेटा था ?	1.00 रू.
16.	और पादरी भाग गया	1.00 रू.
17.	Christianity Unmasked	2 रू.
19.	हमने इस्लाम क्यों छोड़ा ?	1.00 रू.
20.	क्या भारत का एक और विभाजन होगा ?	1.00 रू.
21.	हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का संदेश	1.00 रू.
22.	हिन्दू जागेगा, देश का संकट भागेगा।	1.00 रू.
23.	जनज्ञान का 'सावरकर विशेषांक'	6 रू.
24.	जनज्ञान का 'क्रान्तिदूत विशेषांक'	6 रू.

"हिन्दू धर्म रक्षक" साहित्य की 1000 पुस्तकें मंगाने पर 50 प्रतिशत और 500 पुस्तकें मंगाने पर 25 प्रतिशत कमीशन है। **प्रत्येक आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा कम से कम चौथाई धन अग्रिम भेजें।**

व्यवस्थापक - दयानन्द संस्थान
2286-आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-5